पूर्वांचल खेती

वर्ष : 30 फरवरी 2020 अंक : 02

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

वर्ष 30 | फरवरी, 2020 | अंक 02

संरक्षक
डॉ. बिजेन्द्र सिंह
कुलपति

प्रधान सम्पादक
प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक
डॉ. अनिल कुमार
सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)
मो. नं. 9415140493

सम्पादक मण्डल

डॉ. आर. आर. सिंह
प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

डॉ. वी. एस. चन्देल
सह प्राध्यापक, उद्यान

डॉ. अनिल कुमार
सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

डॉ. वी. पी. चौधरी
सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक
उमेश पाठक
मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

मूँग की वैज्ञानिक खेती 01
—डॉ. अशोक कुमार सिंह

गेहूँ में यूरिया का पर्णीय छिड़काव 03
—डॉ. रामलखन सिंह, डॉ. ओमप्रकाश एवं डॉ. एम.के. पाण्डेय

गेहूँ में प्रमुख रोग, कीट, खरपतवार एवं उनका प्रबंधन 05
—शिवेन्द्र प्रताप सिंह, डॉ. एम.पी. चौहान, अमरनाथ सिंह, सुधाकर सिंह

रबी तिलहनी फसलों की व्याधियां एवं उनकी रोकथाम 08
—वी पी चौधरी, पंकज कुमार एवं प्रो. ए पी राव

गेंदे की खेती से लागत कम लाभ अधिक 10
—डॉ. वी पी सिंह, डॉ. एस के वर्मा एवं डॉ शैलेन्द्र सिंह

रजनीगंधा की उन्नतशील खेती 12
—अभिनव कुमार एवं डॉ. ए.के. सिंह

जावा घास की खेती (सिट्रोनेला): आय का नया साधन 15
—सचि गुप्ता एवं डॉ. डी. राम

तरबूज की खेती कैसे करें? 17
—जितेन्द्र कुमार एवं डॉ. गुलाब चन्द्र यादव

पीली हल्दी की उत्पादन तकनीकी 20
—राजीव कुमार सिंह, पंकज कुमार सिंह एवं डॉ. प्रेमलता श्रीवास्तव

दुधारू पशुओं में टीकाकरण का महत्व 26
—डी.डी. सिंह, ए.के. राय, एस.के. यादव एवं ए.पी. राव

पी.पी.आर. बकरियों की महामारी 28
—डॉ. सुरेन्द्र सिंह, डॉ. एस.के. सिंह, डॉ. एस.एन.लाल एवं डॉ. अनिल कुंमार राय

फरवरी माह में किसान भाई क्या करें? 30

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 31

बॉक्स सूचनाएं

अमूल्य सुझाव 04
पूर्वांचल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये 07
संतुलित उर्वरक का प्रयोग 19
कृषि लागत कम करने हेतु सुझाव 29
लेखकों से अनुरोध 31

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	वाराणसी	डॉ. संजीत कुमार	9837839411	05542–248019
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	9450547719	05498–258201
3.	बलिया	डॉ. रवि प्रकाश मौर्य	9453148303	–
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	9415188020	05278–254522
5.	मऊ	डॉ. एस. एन. सिंह चौहान	–	0547–2536240
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	9458362153	0541–2260595
7.	बहराइच	डॉ. एम. पी. सिंह	9415172725	05252–236650
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	9415155818	–
9.	आज़मगढ़	डॉ. के. एम. सिंह	9307015439	–
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	9455501727	
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	9984369526	–
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. एल. सी. वर्मा	7376163318	05541–241047
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	–
15.	बलरामपुर	डॉ. वी. पी. सिंह	9839420165	–
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	9918622745	–
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	9415039117	–
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	9838952621	–
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. विनायक शाही	8755011086	–
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. ओम प्रकाश	9452489954	–
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	9450885913	–
22.	अमहित–जौनपुर	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	–	–
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	9411320383	–

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. शशांक शेखर सिंह	–	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	श्रीमती सरिता श्रीवास्तव	9415419712	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. एस. के. सिंह	9450164714	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. तेजेन्द्र कुमार	9415560503	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. गजेन्द्र सिंह	7379576412	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

भारत वर्ष में हल्दी सौंदर्य प्रसाधनों, मांगलिक कार्यों के साथ–साथ धार्मिक अनुष्ठानों एवं देव पूजन आदि में भी अति महत्वूपर्ण है। जिस प्रकार खाद्यान्न फसलों में धान एवं गेहूँ का महत्व है उसी प्रकार मसाले वाली फसलों में हल्दी का महत्वपूर्ण स्थान है।

बढ़ते शहरीकरण, घटती जोत एवं बढ़ते आर्थिक दबाव के कारण दूसरे व्यवसायों की तरफ कृषकों का पलायन रोकने हेतु वैकल्पिक कृषि प्रणालियों की आवश्यकता महसूस होने लगी। पिछले कुछ वर्षों में ऐसा देखा गया कि बहुत से किसान खेती से पलायन कर रहे हैं क्योंकि इससे लाभ कम होता जा रहा है। कृषको का कृषि से पलायन रोकने हेतु कृषि में वैकल्पिक एवं लाभप्रद आधारित फसल प्रणालियाँ विकसित करनी होगी। जहाँ से कृषक भूमि के एक ही हिस्से से अधिक आर्थिक लाभ ले सकें तथा कृषक अपनी आर्थिक जरूरतों को अपने पास उपलब्ध कृषि योग्य भूमि से ही पूर्ण कर सकें। इस दिशा में हल्दी एक महत्वपूर्ण फसल है क्योंकि इसकी खेती छायादार स्थानों में भी की जा सकती है। अतः कृषक हल्दी की खेती अपने बागानों में भी कर सकते हैं। इस प्रकार से बाग से होने वाले आर्थिक लाभ के साथ–साथ हल्दी की खेती कर अतिरिक्त लाभ अर्जित किया जा सकता है।

पूर्वाञ्चल खेती के इस अंक में **मूँग की वैज्ञानिक खेती, गेहूँ में यूरिया का पर्णीय छिड़काव, गेहूँ में प्रमुख रोग, कीट, खरपतवार एवं उनका प्रबंधन, रबी तिलहनी फसलों की व्याधियां एवं उनकी रोकथाम, गेंदे की खेती से लागत कम लाभ अधिक, रजनीगंधा की उन्नतशील खेती जावा घास की खेती (सिट्रोनेला): आय का नया साधन, तरबूज की खेती कैसे करें?, पीली हल्दी की उत्पादन तकनीकी, दुधारू पशुओं में टीकाकरण का महत्व, पी.पी.आर. बकरियों की महामारी, फरवरी माह में किसान भाई क्या करें?, प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के** जैसे लेख प्रकाशित किए जा रहे हैं, मुझे पूर्ण विश्वास है कि किसानों की आय में वृद्धि के लिये यह अंक उपयोगी सिद्ध होगा।

(ए.पी. राव)

मूँग की वैज्ञानिक खेती

डॉ. अशोक कुमार सिंह*

मूँग की खेती से जायद मौसम में कम उत्पादन लागत से अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। दलहनी फसलों से मानव जीवन के लिए महत्वपूर्ण पोषक तत्व प्रोटीन उपलब्ध होती है। मूँग की फलियों को तोड़कर फसल अवशेष को मिट्टी पलट हल से जुताई करने से खेत में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है और आगामी खरीफ के लिए खेती की उर्वरता में वृद्धि प्राप्त होती है।

खेत की तैयारी एवं उपयुक्त भूमि

मूँग के उत्पादन हेतु दोमट किस्म की भूमि अधिक उपयोगी होती है। भूमि हल्की से भारी दोमट मिट्टी में मूँग की खेती की जा सकती है। खेती की तैयारी हेतु रोटावेटर से जुताई करके उपयुक्त नमी होने पर बुवाई करना चाहिए यदि नमी की कमी हो तो खेत में पलेवा करके बुवाई करना चाहिए।

मूँग की उपयुक्त प्रजातियाँ

कम समय में पकने वाली निम्न प्रजातियाँ जैसे पंत मूँग–2, नरेन्द्र मूँग–1, मालवीय जागृति एच यू एम–139 सम्राट, मूँग जनप्रिया, मालवीय ज्योति किस्म जो 65 से 70 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। अच्छी उपज के लिए इन किस्मों का प्रयोग बुवाई हेतु करना चाहिए।

बुवाई का उपयुक्त समय

जायद के मौसम में मध्य मार्च से मध्य अप्रैल तक मूँग की बुवाई अधिक लाभदायक होती है।

बीज की मात्रा एवं बीज शोधन

15 से 20 किग्रा शोधित एवं प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए। बीज शोधन के लिए 2.5 ग्राम थीरम या 5 ग्राम ट्राईकोडर्मा के साथ सूडोनोमास से प्रति किग्रा मूँग के बीज को शोधित करना चाहिए। इसके बाद 36 ई.सी. मोनोक्रोटोफास दवा की 10 मिली मात्रा की दर से एक किग्रा बीज को शोधित करना चाहिए जिससे तना भेदक मक्खी के प्रकोप से फसल का बचाव होता है और फसल की बढ़वार भी अच्छी होती है।

मूँग के बीजों का उपचार

निम्न प्रकार से मूँग के बीजों को उपचारित करना चाहिए।

आधा लीटर पानी में 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर को मिला देना चाहिए। इस मिश्रण को दस किग्रा बीजों के ऊपर छिड़ककर हाथ से मिला देना चाहिए। उपचारित बीज को लगभग दो घंटा छाये में सुखा देना चाहिए। सुबह 8 बजे तक या शाम को 5 बजे के बाद बुवाई करना चाहिए। तेज धूप में बुवाई नहीं करना चाहिए।

मृदा परीक्षण के अनुसार यदि भूमि में फास्फोरस की कमी हो तो उपरोक्तानुसार बीजों को उपचारित करने से फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ने से मूँग की पैदावार अच्छी होती है।

*सहायक प्राध्यापक, कृषि महाविद्यालय, कोटवा, आजमगढ़, उ.प्र.

बुवाई की विधि

मूँग की बुवाई के लिए लाइन से लाइन की दूरी 25 से 30 सेमी रखना चाहिए। नालियों में 4 से 5 सेमी गहराई पर बीजों को बोना लाभप्रद रहता है।

रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग

मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना लाभदायक होगा। यदि मृदा परीक्षण की संस्तुति न प्राप्त हो तो 15 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस तथा 20 किग्रा सल्फर का प्रयोग श्रेयस्कर होगा। उर्वरकों का प्रयोग कूड़ों में बीज के नीचे 2–3 सेमी की गहराई पर करना उचित होगा।

सिंचाई की आवश्यकता

मूँग के फसल की सिंचाई आवश्यकतानुसार दो से तीन बार हल्के रूप से करना चाहिए। यदि खेत में नमी कम होत तो बुवाई के 20–35 दिन के प्रथम सिंचाई करना चाहिए। प्रथम सिंचाई के बाद यदि आवश्यकता हो तो प्रथम सिंचाई के 10 से 15 दिन के बाद सिंचाई करना चाहिए। प्रमुख रूप से मूँग में फूल आने के पहले तथा दाना पड़ने के समय सिंचाई करना चाहिए। अधिक पानी न लगे इसलिए मूँग के खेत में क्यारी बनाकर सिंचाई करना उचित रहता है।

खरपतवार की रोकथाम

प्रथम सिंचाई के बाद निकाई करने से अधिक लाभ होता है। यदि रसायनिक नियंत्रण की विधि अपनानी हो तो पेण्डीमेथलीन 30 ई.सी. के 3.3 लीटर या एलाक्लोर 50 ई.सी. की मात्रा को 600 से 700 लीटर मूँग की बुवाई के बाद दो से तीन दिन के अन्दर उपरोक्त रसायनों का छिड़काव करने से खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। खरपतवारों के रोकथाम के लिए पंक्तियों में बोई गई फसल में वीडर यन्त्र का प्रयोग लाभदायक होता है।

रोगों एवं कीटों का नियंत्रण

निम्न उपायों के द्वारा फसल की सफेद मक्खी को नियंत्रित किया जा सकता है।

(1) समय से बुवाई करना चाहिए। रोग रोधी मूँग की प्रजातियों की बुवाई करना चाहिए। मोजैक (चित्रवर्ण) से प्रभावित पौधो को प्रकट होते ही विशेष सावधानी से उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

(2) सफेद मक्खी के प्रकोप की रोकथाम के लिए मिथाइल ओ–डिमेटान 25 ई.सी. या डायमेथोएट 30 ई.सी. 1 लीटर मात्रा के प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना उचित होगा। छिड़काव हेतु 700 से 750 लीटर पानी में घोल कर करना चाहिए।

(3) थ्रिप्स के प्रकोप से बचने के लिए उपरोक्त रसायनों की मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।

(4) हरे फुदके का भी नियंत्रण उपरोक्तानुसार छिड़काव करना चाहिए।

(5) जब कभी फलीबेधक का प्रकोप हो तो क्यूनालफास 25 ई.सी. 1.25 लीटर की मात्रा 600–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

भण्डारण

भण्डारण से पहले मूँग को साफ कर भली–भाँति सुखाकर भण्डारण के पात्र में स्टोरेज विंस में करना उचित होगा।

भण्डारण के पात्रों को साफ कर चूने की पोताई कर देना चाहिए। 1:99 मैलाथियान 50 ई.सी. या 1:150 डाइक्लोरोबास 76 ई.सी. एवं पानी के अनुपात में तीन लीटर घोल को प्रति 100 वर्ग मीटर की दर से गोदाम की फर्श एवं दीवारों पर छिड़काव करना चाहिए। वर्षा ऋतु में मौसम स्वच्छ रहने पर निरीक्षण करके आवश्यकतानुसार धूनीकरण करना चाहिए। सूखी नीम की पत्ती मिलाकर मूँग की उपज का भण्डारण करने से कीटों की सुरक्षा होती है।●

गेहूँ में यूरिया का पर्णीय छिड़काव

डॉ. रामलखन सिंह*, डॉ. ओमप्रकाश** एवं डॉ. एम.के. पाण्डेय***

पौधों के वायुवीय भाग पर उर्वरक का घोल बनाकर छिड़काव करने को पर्णीय छिड़काव कहते हैं। स्प्रेयर मशीन की सहायता से पौधे के ऊपर छिड़काव किया जाता है। पर्णीय छिड़काव की आवश्यकता कुछ विशेष परिस्थितियों में होती है जैसे भूमि में नमी की कमी या जलभराव से यूरिया बहकर नष्ट होने पर फास्फेटिक उर्वरकों के मृदा प्रयोग करने पर उसकी उपलब्धता और कम हो जाती है। ऐसी परिस्थिति में फास्फोरस का पर्णीय छिड़काव करते हैं। अधिक गाढ़े घोल का छिड़काव करने से पौधा झुलस जाता है। उर्वरकों का पर्णीय छिड़काव भूमि में प्रयोग की अपेक्षा अधिक लाभकारी है जिसके निम्नलिखित कारण हैं।

- यूरिया अन्य उर्वरकों की अपेक्षा ज्यादा घुलनशील है इसके प्रयोग से पौधे झुलसने की संभावना कम रहती है।
- इसे पौधे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं।
- यूरिया में नाइट्रोजन की प्रतिशत मात्रा अधिक होने के कारण एक ही बार में अधिक पोषक तत्व पौधों को मिल जाता है।
- यूरिया के पर्णीय छिड़काव से भूमि में अम्ल की मात्रा कम बनती है।
- अन्य उर्वरकों की अपेक्षा यूरिया की निक्षालन द्वारा हानि कम होती है।

छिड़काव के लिए प्रयोग की जाने वाली यूरिया में 0.5 प्रतिशत से अधिक बाइयूरेट नहीं होना चाहिए। गेहूँ में फूल निकलते समय यूरिया का छिड़काव नहीं करना चाहिए। इस समय छिड़काव करने से पौधों में कार्बन, नाइट्रोजन का अनुपात खराब हो जाता है, जिसके कारण दाना छोटा बनता है। गेहूँ की फसल में बुवाई के 35–40 दिन पर छिड़काव किया जा सकता है। एक छिड़काव से दूसरे छिड़काव के बीच 8–10 दिन का अन्तर होना चाहिए। छिड़काव के लिए घोल की सान्द्रता लो वॉल्यूम स्प्रेयर के लिए 8–10 प्रतिशत तथा हाई वॉल्यूम स्प्रेयर के लिए 2.5 से 3.5 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव पौधों पर करने के लिए पहले 4.0 प्रतिशत सान्द्रता का घोल तैयार करते हैं। एक हेक्टेयर में 800 लीटर पानी में 32 किग्रा यूरिया की जरूरत होगी। स्प्रेयर की टंकी में 15 लीटर पानी आता है, इसमें 600 ग्राम यूरिया मिला देने से 4 प्रतिशत का घोल बन जाता है। इस घोल को महीन कपड़े से छान लेते हैं ताकि स्प्रेयर का छेद न बंद हो जाए इस घोल में 1.0 प्रतिशत टीपाल अथवा डिटर्जेंट या शैम्पू मिलने से घोल में चिपचिपाहट बढ़ जाती है, जिससे छिड़काव करने पर घोल पत्तियों पर रूक जाता है और यूरिया का अवशोषण अधिक होता है। खरपतवार कीड़े–मकोड़े व रोगों की घोल के साथ अन्य दवा मिलाकर छिड़काव किया जा सकता है। किन्तु याद रखे कि ये दवा मिलाने पर किसी तरह का अवछेप न बने।

यूरिया का पर्णीय छिड़काव करते समय सावधानियाँ

- पर्णीय छिड़काव तेज हवा में करने से घोल हवा में

*एस.एम.एस./सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, ***वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, उद्यान, के.वी.के., मनकापुर, गोंडा

उड़कर नष्ट हो जाता है तथा पत्तियों पर चिपका घोल हवा में सूख जाता है और पत्तियाँ झुलस जाती हैं। छिड़काव के समय मौसम साफ व शुष्क होना चाहिए।

- वर्षा होने के तुरंत बाद या वर्षा की संभावना होने पर अथवा कुहासा होने पर जब पत्तियाँ गीली हो छिड़काव नहीं करना चाहिए।
- छिड़काव करने से पूर्व स्प्रेयर को भलीभाँति साफ कर लेना चाहिए तथा स्प्रेयर को देख लेना चाहिए कि स्प्रेयर सही काम कर रहा है अथवा नहीं।
- छिड़काव फसल की विकास व वृद्धि के समय करना चाहिए।
- छिड़काव करते समय छिड़काव करने वाले व्यक्ति को नाक व मुँह में कपड़ा बाँध लेना चाहिए तथ ध्यान रहे कि छिड़काव करते समय हवा शरीर की तरफ न आए।
- छिड़काव करने के बाद हाथ पैर व मुँह को साबुन से अच्छी तरह धो लेना चाहिए।
- छिड़काव के समय बच्चों को दूर रखें।
- उर्वरकों के मृदा प्रयोग की अपेक्षा छिड़काव करने हेतु अधिक कुशलता की जरूरत होती है घोल की सान्द्रता बढ़ने पर फसल झुलस जाती है।
- मृदा में प्रयोग के लिए अधिक उर्वरक की जरूरत होती है जबकि छिड़काव के लिए कम उर्वरक की जरूरत होती है।
- उर्वरकों की अधिक मात्रा प्रयोग करने से मृदा की भौतिक तथा रसायनिक दशा खराब होती है जबकि छिड़काव करने से भूमि की दशा में कोई अंतर नहीं पड़ता है।
- मृदा में उर्वरकों का प्रयोग करने में लागत अधिक आती हैं जबकि उर्वरकों के छिड़काव में कम लागत आती है।
- सभी पोषक तत्वों को मृदा में प्रयोग किया जाता है जबकि पर्णीय छिड़काव में सभी पोषक तत्वों का प्रयोग नहीं किया जाता है।
- शुष्क भूमि में नमी की कमी होने पर अथवा सिंचाई के बाद ही उर्वरकों का प्रभाव प्रारम्भ होता है जबकि छिड़काव करने के बाद वर्षा होने पर पोषक तत्व बह जाते हैं।
- फास्फोरस का प्रयोग मृदा में फसल की बुवाई के समय ही किया जाता है। फास्फोरस भूमि में स्थिर हो जाता है जबकि पर्णीय छिड़काव द्वारा फास्फोरस किसी भी अवस्था पर फसल में छिड़काव किया जा सकता है।
- फूल निकलते समय उर्वरकों का प्रयोग किया जा सकता है जबकि छिड़काव नहीं करना चाहिए।●

अमूल्य सुझाव

- ऊसर व बंजर भूमि का उपचार कर कृषि योग्य बनाकर खेती के प्रयोग में लाएं।
- सिंचाई जल उपयोग में बृद्धि हेतु ड्रिप एवं स्प्रिकलर पद्धति पर बढ़ावा देना तथा इसके प्रयोग पर प्रशिक्षण प्रदान कर इसे बढाने तथा क्रान्तिक अवस्थाओं पर उचित मात्रा में सिंचाई करें।
- कृषि लागत में कमी हेतु कृषि यन्त्रीकरण का प्रयोग कर जीरो टिलेज, सीडड्रिल व कम्बाइन हार्वेस्टर के साथ भूसा बनाने वाली मशीन के प्रयोग पर बल दिया जाय।
- मृदा स्वास्थ्य बढ़ानें के लिए जैविक उर्वरक, कार्बनिक खाद, फसल अवशेषों का प्रबन्ध व मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अनुसार उर्वरकों के संतुलित प्रयोग पर बल दिया जाना जिससे उत्पादन बढानें के साथ लागत में कमी लावे।

गेहूँ में प्रमुख रोग, कीट, खरपतवार एवं उनका प्रबंधन

शिवेन्द्र प्रताप सिंह*, डॉ. एम.पी. चौहान**, अमरनाथ सिंह***, सुधाकर सिंह*

गेहूँ भारत की धान के बाद दूसरी प्रमुख खाद्यान्न फसल है। देश के लगभग सभी राज्यों में इसकी खेती की जाती है। राष्ट्रीय खाद्य एवं पोषक तत्वों की सुरक्षा में गेहूँ एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, यह भोजन में लगभग 55 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 20 प्रतिशत कैलोरी एवं 15 प्रतिशत प्रोटीन प्रदान करता है। गेहूँ की फसल में कवक, वायरस, बैक्टीरिया और निमेटोड द्वारा विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। इन सभी रोगों द्वारा गेहूँ की पैदावार में प्रतिवर्ष लगभग 15–20 प्रतिशत की हानि होती है। सबसे अधिक हानि कवकों से जबकि वायरस एवं बैक्टीरिया द्वारा बहुत ही कम हानि होती है, जबकि निमेटोड एक विशेष क्षेत्र में ही हानि पहुँचाता है। गेहूँ की अधिक पैदावार के लिए समय से शुद्ध, प्रमाणित शोधित बीज का प्रयोग, मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरक का प्रयोग, सिंचाई आदि किया जाता है। यह सब तकनीकी अपनाने के बाद यदि कीट एवं बीमारियों पर ध्यान न दिया जाए तो सब मेहनत बेकार हो जाती है। उ.प्र. में वर्ष 2007–08 में 93.49 लाख हे में गेहूँ की फसल ली गई थी जिससे कुल उत्पादन 263.12 लाख मी/टन हुआ तथा उत्पादकता 27.49 कु/हे. रहा। जिसमें क्षेत्रफल में 5.1 प्रतिशत, उत्पादन में 32.90 प्रतिशत तथा उत्पादकता में 26.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। गेहूँ की फसल में प्रमुख रूप से दीमक, गुजिया वीविल एवं कभी–कभी माहू कीट का प्रकोप होता है तथा गेरुई रोग करनाल बंट, अनावृत कण्डुआ, पत्ती धब्बा रोग एवं सेहुआ रोग लगने की संभावना बनी रहती है। जिनकी पहचान करना आवश्यक हो जाता है। यह रबी मौसम में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसल है। गेहूँ की फसल में अधिकतम उत्पादकता प्राप्त करने में मुख्य बाधाओं में से केवल खरपतवारों की उपस्थिति के कारण ही 10 से 70 प्रतिशत की हानि हो जाती है, जिसका प्रभाव विशेषकर धान–गेहूँ चक्र अपनाये जाने वाले क्षेत्रों में अधिक पाया गया है। किसान जो अपनी पूर्ण शक्ति व साधन फसल की अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिये लगता है, ये अनैच्छिक पौधे इस उद्देश्य को पूरा नहीं होने देते । खरपतवार फसलों के लिए भूमि में निहित पोषक तत्व और नमी का एक बड़ा हिस्सा शोषित कर लेते हैं, साथ ही फसल को आवश्यक प्रकाश और स्थान से भी वंचित कर देते हैं, फलस्वरूप पौधों की विकास की गति धीमी पड़ जाती है और उत्पादन में कमी आ जाती है। इसलिए उचित समय पर प्रभावी ढंग से इनका नियंत्रण समेकित खरपतवार प्रबंधन के रूप में करना अत्यन्त ही आवश्यक है।

गेहूँ के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

(1) दीमक कीट

इस कीट में बहुरूपता पायी जाती है। यह सामाजिक कीट कालोनी बनाकर रहते हैं एक कालोनी में 90 प्रतिशत श्रमिक, 2–3 प्रतिशत एक–एक रानी राजा होते हैं। यह सर्वभक्षी कीट हैं तथा खेतों और घरों दोनों जगह नुकसान पहुँचाता है क्षति केवल शिशु एवं प्रौढ़ श्रमिक दीमक ही करते हैं। इनका आक्रमण गेहूँ का पौधा उगने के साथ ही प्रारम्भ हो जाता है जिस समय पौधे छोटे एवं कोमल होते हैं तो ये जमीन की सतह के नीचे से काट कर सुखा देते हैं।

(2) गुजियाँ वीविल कीट

यह कीट भूरे मटमैले रंग का होता है जो पत्तियों एवं हरी बालियों का रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं तथा मधुस्राव छोड़ते हैं, जिसके कारण काली फफूँदी उग आती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न होती है। पौधा कमजोर हो जाता है उत्पादन में कमी हो जाती है।

कीट प्रबंधन

(1) गेहूँ के बुवाई से पूर्व दीमक के नियंत्रण हेतु क्लोरपायरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. या

*शोध छात्र, **प्राध्यापक, अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन, ***परियोजना सहायक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

सारिणी–1
गेहूँ के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

रोग	प्रबंधन
गेरुई या रतुआ रोग	
(अ) पीला धारीदार रतुआ	रोग रोधी किस्में जैसे पी बी डब्ल्यू 644, पी बी डब्ल्यू 550, पी बी डब्ल्यू 502, डब्ल्यू एच 542, डब्ल्यू एच 896 इत्यादि का चुनाव करें। इस बीमारी के प्रबन्धन के लिए प्रोपीकोनाजॉल 25 ईसी के 0.1 प्रतिशत घोल का एक या दो बार पत्तियों पर छिड़काव अवश्य करें।
(ब) भूरा रतुआ/पत्ती रतुआ	भूरा रतुआ रोधी किस्में जैसे पी बी डब्ल्यू 373, एच डी 2967, एच डी 2733, एच डी 2864 एच डी 2888, डी एल 784–3 एवं राज 3765 का चुनाव करें। प्रोपिकोनाजोल 25 ईसी के 0.1 प्रतिशत घोल (1 मिली/लीटर पानी) का छिड़काव करें।
(स) काला/तना रतुआ	रोग रोधी किस्में जैसे एच डी 2833, एच डी 2888, एच डी 2987, पी बी डब्ल्यू 373, पी बी डब्ल्यू 502, पी बी डब्ल्यू 550 आदि ही लगाए। फसल में बीमारी के लक्षण प्रकट होते ही प्रोपिकोनाजोल 25 ई सी के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर कर दे।
पर्ण झुलसा	बीजोपचार कार्बोक्सिन (75 डब्ल्यू पी) 2.5 ग्राम/किग्रा बीज की दर से करें। उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में रोगरोधी किस्में एच डी 2985, एन डब्ल्यू 2036, के 9107, एच डी 2733 डी बी डब्ल्यू 14, एच डी 2888, के 0307, एच यू डब्ल्यू 468 का चुनाव करें एवं प्रोपिकोनाजोल (25 ईसी) 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें।
अनावृत कण्डवा रोग	बीजोपचार कार्बोक्सिन (75 डब्ल्यू पी) या कार्बेन्डाजिम (50 डब्ल्यू पी) 2.5 ग्राम/किग्रा बीज की दर से करें।
करनाल बंट	रोग रोधी किस्मों जैसे कि पी बी डब्ल्यू 502, डब्ल्यू एच 896, पी डी डब्ल्यू 233 का प्रयोग करें। बीजोपचार थीरम 2 ग्राम+1 ग्राम कार्बोक्सिन/प्रति किग्रा बीज की दर से करें। बूट लीफ अवस्था में प्रोपिकोनाजोल 25 ईसी 0.1 प्रतिशत का पत्तियों पर छिड़काव करें।
ध्वज कंड	बीजोपचार कार्बोक्सिन (75 डब्ल्यू) या कार्बेन्डाजिम (50 डब्ल्यू पी) 2.5 ग्राम/किग्रा बीज की दर से करें, पहले साल जिन किस्मों में यह ध्वज कांड देख गया हो, उसकी बुवाई न करें।
चूर्णी फफूँद	उत्तर पर्वतीय क्षेत्रों में एच एस 542, वी एल 907, एच एस 507, वी एल 829, एच एस 490, वी एल 892 का प्रयोग करें। रोग के आते ही दाने बनने की अवस्था तक प्रोपिकोनाजोल 25 ई सी 0.1 प्रतिशत का पत्तियों पर छिड़काव करें।
पर्वतीय बंट (हील बंट)	रोग रोधी किस्मों का प्रयोग करें। कार्बोक्सिन (बीटावैक्स 75 डब्ल्यू पी) 0.25 प्रतिशत के साथ बीजोपचार करें।

थायोमेथाक्सास 30 एफ.एस. की 3 मिली मात्रा प्रति किग्रा बीज की दर से बीज को शोधित करना चाहिए।

(2) जैव कीटनाशी व्यूवेरिया बैसियाना 1.15 प्रतिशत की 2.5 किग्रा मात्रा को 60–70 किग्रा गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के बाद प्रति हेक्टेयर में गेहूँ की बुवाई से पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला दें। इससे दीमक सहित अन्य भूमि में रहने वाले कीट का नियंत्रण हो जाता है।

(3) खड़ी फसल में दीमक एवं गुजिया कीट के नियंत्रण हेतु क्लोरोपाइरीफास 20 ईसी 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से सिंचाई के पानी के साथ खेत में प्रयोग करें।

(4) माहू कीट के नियंत्रण हेतु डाइमेथोएट 30 प्रतिशत ईसी एक लीटर को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

गेहूँ के प्रमुख खरपतवार एवं उनका प्रबंधन

(1) चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

इस श्रेणी में आने वाले खरपतवार हैं, बथुआ, हिरनुखरी, कृष्णनील, गजरी, प्याजी, चटरी–मटरी, जंगली पालक, सेंजी, भांग, सत्यानाशी, गाजर, घास आदि।

(2) घास जाति/संकरी पत्ती वाले खरपतवार

इस श्रेणी में गेहूँसा, जंगली जई, मोथा, दूब आदि आते हैं। खरपतवारों से गेहूँ की फसल में 25–30 प्रतिशत उपज में कमी आती है। फसल के पौधों का खरपतवारों के साथ पोषक तत्वों, पानी व अन्य प्राकृतिक संसाधनों के लिए क्रांतिक अवस्था में प्रतिस्पर्धा फसल की उपज के लिए सर्वाधिक नुकसानदेह होती है। गेहूँ की फसल में यह क्रांतिक अवस्था प्रारंभिक बढ़वार के 30–45 दिनों तक रहती है।

खरपतवार नियंत्रण की यांत्रिक विधि

इस विधि द्वारा खरपतवार पर नियंत्रण करना सरल एवं प्रभावी है, लेकिन इस विधि में समय व खर्चा दोनों ही अधिक लगता है। बुवाई के 30 से 45 दिन के अन्दर खुरपी या कसोले या हैंड हो आदि से निराई–गुड़ाई करके लाइनों में बोई गई फसल में खरपतवारों का नियंत्रण आसानी से किया जा सकता है, लेकिन छिटकवा विधि से बुवाई की गयी गेहूँ की फसल में यांत्रिक विधि द्वारा खरपतवारों का नियंत्रण संभव नहीं हो पाता है। अतः शाकनाशियों के प्रयोग के द्वारा ही नियंत्रण करना जरूरी हो जाता है।

रसायनिक विधि

गेहूँ की फसल में रसायनिक विधि से चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु 2,4 डी सोडियम साल्ट की 625 ग्राम मात्रा 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के 32 से 35 दिन के बाद प्लैट फैन नोजल से समान रूप से खेत में छिड़काव करना चाहिए। इस दवा का 30 दिन से पहले छिड़काव करने पर बालियाँ प्रभावित हो जाती हैं, अथवा मैटसल्फ्यूरान 20 ग्राम मात्र प्रति हेक्टेयर 400–500 लीटर पानी में घोल बनाकर खरपतवारों में 2–3 पत्तियाँ आने पर छिड़काव करें। यह अवस्था आमतौर पर जंगली जई के अलावा सभी खरपतवारों में बुवाई के 30 से 35 दिन बाद आ जाती है। गेहूँ में घास जाति के खरपतवारों का नियंत्रण अकेले निराई–गुड़ाई विधि से भी प्रभावी तरीक से संभव नहीं हो पाता है, क्योंकि गेहूँसा प्रारम्भ में बाली आने से पहले गेहूँ के पौधों के समान ही होता है, इसलिए इसे आसानी से गेहूँ की फसल से अलग नहीं किया जा सकता है। ध्यानपूर्वक गेहूँसा के पौधों की जड़ों के पास तने को देखने से पता चलेगा कि तने का रंग लाल है जबकि गेहूँ के पौधों की जड़ों के पास तना सफेद रंगा का होता है। इसके नियंत्रण हेतु सल्फोसल्फ्यूरान (लीडर) 33 ग्राम मात्र अथवा क्लोडिनोफोप प्रोपरजाईल (टोपिक) नामक रसायन की 400 ग्राम मात्रा 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के 30–35 के बाद समान रूप से खेत में छिड़काव करना चाहिए। जहाँ चौड़ी पत्ती वाले एवं संकरी पत्ते वाले दोनों प्रकार के खरपतवार हों, वहाँ पर मेट्रीब्यूजीन (सेन्कोर) 250 ग्राम मात्रा 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर में बुवाई के 25–30 दिन बाद छिड़काव करें। सल्फोसल्फ्यूरान 750 डब्ल्यू पी की 33 ग्राम+मेट सल्फ्युरान मिथाइल 20 प्रतिशत डब्ल्यू पी की 20 ग्राम बुवाई के 30–35 दिन पश्चात 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। यदि गेहूँ के साथ सरसों, चना, मटर आदि मिलवा फसल ली गयी है तो पेन्डीमेथलीन (स्टाम्प) 3.3 लीटर मात्रा 600–700 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के तीन दिन के अन्दर समान रूप से खेत में छिड़काव करें।●

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रू0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

रबी तिलहनी फसलों की व्याधियाँ एवं उनकी रोकथाम

वी पी चौधरी*, पंकज कुमार* एवं प्रो. ए पी राव*

रबी के मौसम में मुख्य रूप से चार तिलहनी फसलों जैसे राई/सरसों, तोरिया/लाही, अलसी एवं कुसुम प्रमुख रूप से उगाई जाती है। इन फसलों में लगने वाले प्रमुख रोग एवं कीट और उनकी रोकथाम करके उत्पादन बढ़ाया जा सकता है।

राई/सरसों

प्रमुख व्याधियाँ

(1) झुलसा रोग

यह रोग पहले पत्तियों पर दिखाई देता है। पत्तियों पर गोल–गोल भूरे रंग के धब्बे बनते हैं यही धब्बे बड़े होकर पत्तियों को सुखा देते हैं। इस रोग का कारक अल्टरनेरिया फफूँद होता है जो बाद में फलियों पर भी दिखाई देने लगता है।

उपचार

इस बीमारी की रोकथाम के लिए जिंक मैंगनीज कार्बामेट 75 प्रतिशत या जीरम 80 प्रतिशत या जिनेब 75 प्रतिशत का 2.5 किग्रा या जीरम 27 प्रतिशत का 3.5 लीटर प्रति हेक्टेयर 800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(2) सफेद गेरुई रोग

यह रोग भी फफूँद जनित है जो पत्तियों के ऊपर सफेद रंग के धागे के रूप में होता है जो बाद में फफोले का रूप बना लेता है।

उपचार

इस रोग की रोकथाम के लिए रीडोमिल जेड 78 को 2.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(3) तुलासिता रोग (पाउडरी मिल्ड्यू)

यह फफूँद जनित रोग है जो पत्तियों की निचली सतह पर रोयेंदार फफूँद एवं ऊपरी सतह पर पीलापन लिए हुए होता है जो इस रोग का प्रमुख लक्षण है।

उपचार

इस रोग की रोकथाम के लिए रीडोमिल जेड 78 को 2.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 800 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करते हैं अथवा 3.0 किग्रा सल्फर प्रति हेक्टेयर अथवा 50 मिली कैराथेन तथा 1.5 किग्रा मैंकोजेब के मिश्रण को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

(4) आरा मक्खी

इस कीट की सूड़ियाँ काले रंग की होती हैं एवं पत्तियों को किनारे से अथवा छेद बनाकर खाती है। अधिक प्रकोप होने पर पौधे पत्ती विहीन हो जाते हैं तथा प्रकोपित पौधों में फलियाँ नहीं लगती हैं।

रोकथाम

इस कीट को नियंत्रित करने के लिए बुवाई के समय इमिडाक्लोप्रिड 70 प्रतिशत का 7.0 ग्राम प्रति किग्रा की दर से बीज शोधन करना चाहिए। अधिक प्रकोप होने पर मैलाथियान 50 प्रतिशत की 1.5 लीटर अथवा डाईक्लोरोवास 76 प्रतिशत की 500 मिली मात्रा को 600–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

(5) चितकबरा (पेन्टेड) बग

इसको दगीला कीट भी कहते हैं। इस कीट का प्रकोप फसल पर प्रारंभिक तथा परिपक्व अवस्थाओं में दिखाई देता है। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ चमकीले काले, नारंगी एवं लाल रंग के चकत्ते युक्त होते हैं। शिशु एवं प्रौढ़ पौधों के सभी भाग से रस चूसते हैं, जिससे पौधों की पत्तियाँ किनारे से सूखकर गिर जाती हैं। प्रभावित फलियों में दाने कम बनते हैं।

रोकथाम

इस कीट की रोकथाम के लिए डाईमिथोएट 30

*प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

प्रतिशत अथवा क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत की 1.0 लीटर मात्रा को 600–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

(6) माँहू

इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पौधों के बढ़ने वाले भागों, फलियों एवं फूलों पर झुंड में हजारों की मात्रा में चिपके रहते हैं और उनसे रस चूसते हैं जिसके कारण पौधों की बढ़वार रूक जाती है पौधा छोटा रह जाता है, तना छोटा, पतला और कमजोर होकर पीला पड़कर सूखने लगता है, जिससे उसमें फलियाँ नहीं बन पाती हैं।

रोकथाम

इस कीट का नियंत्रण चितकबरा बग कीट की भाँति किया जा सकता है।

तोरिया/लाही

प्रमुख व्याधियाँ

इस फसल में राई/सरसों की बीमारियाँ तथा कीटों का प्रकोप होता है अतः उसी भाँति उपचार का प्रयोग करके इसकी बीमारियों को रोकथाम की जाती है।

अलसी

अलसी की फसल में निम्न बीमारियों का प्रकोप होता है। बीज जनित रोगों के बचाव के लिए सबसे पहले उपचारित बीज का ही प्रयोग करना चाहिए। बुवाई के पूर्व बीज को 2.5 ग्राम थीरम अथवा 2.0 ग्राम थीरम व 1.0 ग्राम कार्बेन्डाजिम को मिलाकर प्रति किग्रा बीज को उपचारित करके बुवाई करना चाहिए।

प्रमुख व्याधियाँ

(1) रतुआ या गेरुई रोग

यह एक फफूँद जनित रोग है जो पौधे के हर भाग पर दिखाई देता है पहले यह रोग पत्तियों से शुरू होता है जो नारंगी रंग के फफोले के रूप में दिखाई देता है।

उपचार

इस रोग के रोकथाम के लिए मैग्नीज कार्बामेट 2.0 किग्रा अथवा घुलनशील गंधक 3.0 किग्रा को 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करके इस रोग से बचाव किया जा सकता है।

(2) उकठा रोग

इस रोग में फसल ऊपरी सिरे से पीली पड़ने के साथ सूखने लगती है तथा हाथ लगते ही पौधा उखड़ जाता है। यह रोग फ्यूजेरियम कवक के कारण होता है, जो भूमि जनित एवं बीज जनित रोग है।

उपचार

इस बीमारी से फसल को बचाने के लिए बीज तथा खेत को ट्राइकोडरमा से उपचारित करने के उपरांत ही बुवाई करें। बीज को उपचारित करने के लिए 5.0 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से ट्राइकोडरमा का प्रयोग करें तथा खेत को उपचारित करने के लिए 10–12 किग्रा ट्राइकोडरमा की आवश्यकता पड़ती है।

(3) बुकनी रोग

इस रोग का लक्षण पहले पत्तियों पर सफेद चूर्ण के रूप में फैला रहता है जिससे पौधे में क्लोरोफिल न बनने के कारण पहले पत्तियाँ तथा बाद में पूरा पौधा सूख जाता है।

उपचार

इस रोग की रोकथाम के लिए घुलनशील गंधक 3.0 किग्रा अथवा 350 मिली कैराथेन व 1.5 किग्रा मैंकाजेब का मिश्रण प्रति हेक्टेयर 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करके इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

(4) गाल मिज

इस कीट का लार्वा फसल की खिलती कलियों के अन्दर पुंकेसर को खा कर क्षति पहुँचाता है, जिससे फलियों में दाने नहीं बनते हैं।

रोकथाम

इस कीट की रोकथाम के लिए डाइमिथोएट 30 प्रतिशत अथवा मोनोक्रोटोफास 36 प्रतिशत की 1.0 लीटर मात्रा को 600–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

(शेष पृष्ठ 11 पर)

गेंदे की खेती से लागत कम लाभ अधिक

डॉ. वी पी सिंह*, डॉ. एस के वर्मा** एवं डॉ शैलेन्द्र सिंह***

बाजार में अब वर्ष भर गेंदा के फूलों की डिमांड रहती है। त्योहारों पर प्रतिष्ठानों या घरों की सजावट करनी हो, या फिर वैवाहिक कार्यक्रम हों, बिना फूलों के पूरे नहीं हो सकते, वहीं मंदिरों पर पूजन के लिए फूलों की जरूरत रहती है। इसके अतिरिक्त अन्य कार्यक्रमों में भी फूलों की माँग बनी रहती है। ऐसे में गेंदा की खेती करना काफी फायदे का सौदा है।

गेंदा के कुछ प्रजातियों जैसे हजारा और जाफरी प्रजाति की फसल वर्ष भर की जा सकती है। एक फसल के खत्म होते ही दूसरी फसल के लिए पौध तैयार कर ली जाती है। इस खेती में जहाँ लागत काफी कम होती है, वहीं आमदनी काफी अधिक होती है। गेंदा की फसल ढाई से तीन माह में तैयार हो जाती है। इसकी फसल दो महीने में प्राप्त की जा सकतीहै। यदि अपना निजी खेत है तो एक बीघा में लागत एक हजार से डेढ़ हजार रूपये की लगती है, वहीं सिंचाई की भी अधिक जरूरत नहीं होती।

जलवायु और भूमि

उत्तर भारत में मैदानी क्षेत्रों में शरद ऋतु में उगाया जाता है तथा भारत के तराई/पहाड़ी क्षेत्रों में गर्मियों में इसकी खेती की जाती है, जो कि विशेष लाभप्रद है। गेंदा की खेती बलुई दोमट भूमि का उचित जल निकास वाली उत्तम मानी जाती है। जिस भूमि का पी एच मान 7.0 से 7.5 के बीच होता है वह भूमि खेती के लिए अच्छी मानी जाती है।

उन्नतशील प्रजातियाँ

जैसे कि नगेटरेटा, पूसा नारंगी, पूसा बसन्ती आदि।

खेत की तैयारी

गेंदे के बीज को पहले पौधशाला में बोया जाता है। पौधशाला में पर्याप्त गोबर की खाद डालकर भलीभाँति जुताई करके तैयार की जाती है। मिट्टी को भुरभुरा बनाकर रेत भी डालते हैं तथा तैयार खेत या पौधशाला में क्यारियाँ बना लेते हैं। क्यारियाँ 15 सेमी ऊँची एक मीटर चौड़ी तथा 5 से 6 मीटर लम्बी बना लेना चाहिए। इन तैयार क्यारियों में ऊपर से ढक देना चाहिए तथा जब तक बीज जमना शुरू न हो तब तक हजारे से सिंचाई करनी चाहिए इस तरह से पौधशाला में पौध तैयार करते हैं।

बीज बुवाई

गेंदे की बीज की मात्रा किस्मों के आधार पर लगती है। जैसे कि संकर किस्मों का बीज 700 से 800 ग्राम प्रति हेक्टेयर तथा सामान्य किस्मों का बीज 1.25 किग्रा प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। भारत वर्ष में इसकी बुवाई जलवायु की भिन्नता के अनुसार अलग–अलग समय पर होती है। उत्तर भारत में दो समय पर बीज बोया जाता है जैसे कि पहली बार मार्च से जून तक तथा दूसरी बार अगस्त से सितम्बर तक बुवाई की जाती है।

पौध रोपाई

गेंदा के पौधों की रोपाई समतल क्यारियों में की जाती है रोपाई की दूरी उगाई जाने वाली किस्मों पर निर्भर करती है। अफ्रीकन गेंदे के पौधों की रोपाई में 60 सेमी लाइन से लाइन तथा 45 सेमी पौधे से पौधे की दूरी रखते हैं तथा अन्य किस्मों की रोपाई में 40 सेमी पौधे से पौधे तथा लाइन से लाइन की दूरी रखते हैं।

खाद एवं उर्वरक

250 से 300 कुंतल सड़ी गोबर की खाद खेत की तैयारी करते समय प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए। इसके साथ ही अच्छी फसल के लिए 120 किग्रा नत्रजन, 80 किग्रा फास्फोरस तथा 80 किग्रा पोटाश तत्व के रूप में प्रति हेक्टेयर देना चाहिए। फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा खेत की तैयारी करते समय अच्छी तरह जुताई करके मिला देना चाहिए। नत्रजन की आधी

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, (उद्यान), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, ***विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य), कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराइच, उ.प्र.

मात्रा दो बार में बराबर मात्रा में देना चाहिए। पहली बार रोपाई के एक माह बाद तथा शेष रोपाई के दो माह बाद दूसरी बार देना चाहिए।

निराई–गुड़ाई

गेंदा के खेत को खरपतवारों से साफ सुथरा रखना चाहिए तथा निराई–गुड़ाई करते समय गेंदा के पौधों पर 10 से 12 सेमी ऊँची मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए जिससे कि पौधे फूल आने पर गिर न सकें।

रोग और नियंत्रण

गेंदा में अर्ध पतन, खर्रा रोग, विषाणु रोग तथा मृदु गलन रोग लगते हैं। अर्ध पतन हेतु नियंत्रण के लिए रैडोमिल 2.5 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम या केप्टान 3 ग्राम या थीरम 3 ग्राम से बीज को उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए। खर्रा रोग के नियंत्रण के लिए किसी भी फफूँदी नाशक को 500 से 600 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। विषाणु एवं गलन रोग के नियंत्रण हेतु मिथायल ओ डिमेटान 2 मिली या डाई मिथोएट एक मिली प्रति लीटर पानी के हिसाब छिड़काव करना चाहिए।

कीट नियंत्रण

गेंदा में कलिका भेदक, थ्रिप्स एवं पर्ण फुदका कीट लगते हैं। इनके नियंत्रण हेतु फास्फोमिडान या डाइमेथोएट 0.05 प्रतिशत के घोल का छिड़काव 10 से 15 दिन के अंतराल पर दो–तीन छिड़काव करना चाहिए अथवा क्यूनालफॉस 0.07 प्रतिशत का छिड़काव आवश्यकतानुसार करना चाहिए।

तुड़ाई और कटाई

जब हमारे खेत में गेंदा की फसल तैयार हो जाती है तो फूलों को हमेशा प्रातः काल ही तुड़ाई करना चाहिए।

पैदावार

गेंदे की उपज भूमि की उर्वरा शक्ति के अनुसार 125 से 150 कुंतल प्रति हेक्टेयर फूल के रूप में प्राप्त होती है कुछ उन्नतशील किस्मों से पुष्प उत्पादन 350 कुंतल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है यह उपज पूरी फसल समाप्त होने तक प्राप्त होती है।●

(पृष्ठ 9 का शेष)

(5) बालदार सूड़ी

सूड़ी काले रंग की तथा पूरा शरीर बालों से ढका रहता है। सूड़ियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में रहकर पत्तियों को खाती है तथा तीव्र प्रकोप होने पर पूरा पौधा पत्ती विहीन हो जाता है।

रोकथाम

इस कीट के नियंत्रण के लिए मैलाथियान 50 प्रतिशत अथवा डाइक्लोरोवास 76 प्रतिशत की 500 मिली मात्रा को 600–800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कुसुम

इस फसल में अब तक बहुत कम बीमारियों तथा कीटों का प्रकोप देखा गया है। इसमें गेरुई एवं उकठा प्रमुख रोग है जिनकी रोकथाम अलसी फसल की भाँति करना चाहिए। कुसुम में प्रमुख रूप में माँहू कीट का प्रकोप होता है जिसकी रोकथाम राई/सरसों की भाँति करना चाहिए।●

किसान भाइयों,

लगातार फसल उगाने से मृदा के स्वास्थ्य में हो रही गिरावट के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में स्थिरता की स्थिति हो गयी है। समय रहते खेत की मिट्टी की दशा को सुधारने एवं उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि किसान भाई अपने खेत की मिट्टी की जाँच करवाने के प्रश्चात संस्तुति मात्रा में सुंतुलित उर्वरक का प्रयोग करें तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य बनवायें। फसल अवशेष को न जलाएं उसका प्रबन्ध कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाएं। खेत को खाली न छोड़ें बल्कि हरी खाद हेतु सनई व ढैचा पलटकर हरी खाद बनायें। जीवांशिक खादों का अधिक से अधिक प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने पर बल दें।

रजनीगंधा की उन्नतशील खेती

अभिनव कुमार* एवं डॉ. ए.के. सिंह**

रजनीगंधा एक सदाबहार जड़ी बूटी वाला पौधा है जिसमें फूल डंठल 75–100 सेमी लम्बी होती है जो 10–20 चिमनी के जैसे आकार के सफेद रंग के फूल उत्पन्न करता है। कट फ्लॉवर दिखने में आकर्षित, ज्यादा समय के लिए स्टोर करके और मीठी सुगंध वाले होते हैं इसलिए इनका प्रयोग गुलदस्ते बनाने के लिए किया जाता है। इसके खुले फूलों का प्रयोग माला और वेणी बनाने के लिए किया जाता है। यह जमीन और गमले में उगाने के लिए उचित है। इनके फूलो से सुगन्धित तेल निकाला जाता है।

मिट्टी

रेतली और चिकनी और बढ़िया जल–निकास वाली मिट्टी रजनीगंधा की खेती के लिए उचित है। इसकी खेती के लिए मिट्टी का पी.एच. 6.5–7.5 होना चाहिए।

प्रसिद्ध किस्में और उपज

सिंगल किस्में

कलकाता सिंगल

यह सफेद फूल की किस्म है। प्रत्येक डंडी 60 सेमी लम्बी होती है और लगभग 40 फूल देती है। यह मुख्य तौर पर खुले और कट फ्लावर के लिए प्रयोग की जाती है।

प्राज्वल

यह किस्म आई आई एच आर (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ हॉर्टिकल्चरल रिसर्च), बैंगलोर द्वारा तैयार की गई है। यह किस्म मेक्सिकन सिंगल और श्रृंगार के मेल से तैयार की गई है। इसके फूल की कलियाँ हल्के गुलाबी रंग की होती हैं जिसमें से सफेद रंग के फूल उत्पन्न होते हैं। यह मुख्य तौर पर खुले और कट फ्लॉवर के लिए प्रयोग की जाती है।

डबल किस्में

रजत रेखा

यह किस्म एन बी आर आई (नेशनल बोटैनिकल रिसर्च इन्स्टीट्यूट), लखनऊ द्वारा तैयार की गई है। इसके फूलों पर सिल्वर और सफेद रंग की धारियाँ होने के साथ सुरमई रंग की पत्तियाँ होती हैं।

पर्ल डबल

इसका यह नाम इसके लाल रंग के फूलों के कारण पड़ा, जो मोतियों की तरह होते हैं। इसे कट फ्लावर, खुले फूल और तेल की प्राप्ति के लिए प्रयोग किया जाता है।

वैभव

यह किस्म आई आई एच आर (इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ हॉर्टिकल्चरल रिसर्च), बैंगलोर द्वारा तैयार की गई है। यह किस्म मेक्सिकन सिंगल और आईआईएचआर–2, के मेल से तैयार की गई है। इसके फूल की कलियाँ हल्के रंग की होती हैं जब सफेद रंग के फूल उत्पन्न होते हैं। इसका प्रयोग कट फ्लावर के उद्देश्य के लिए किया जाता है।

अन्य किस्में

सिंगल किस्में

अर्का निरन्तर, पुणे सिंगल, हैदराबाद सिंगल, फुले रजनी, मेक्सिकन सिंगल।

डबल किस्में

हैदराबाद डबल, कलकत्ता डबल।

*शोध छात्र, **विभागाध्यक्ष, उद्यान विज्ञान एवं वानिकी महाविद्यालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

अर्द्ध डबल किस्में

कल्याणी डबल, सुवासिनी।

रंग बिरंगी किस्में

स्वर्ण रेखा।

रंग बिरंगी सिंगल किस्में

रजत (पत्तियों के किनारे सफेद रंग के)।

रंग बिरंगी डबल किस्में

धवल (पत्तियों के किनारे सुनहरे रंग के)।

भूमि की तैयारी

रजनीगंधा की खेती के लिए जमीन को अच्छी तरह से तैयार करें। मिट्टी को भुरभुरा करने के लिए 2–3 बार जुताई करना आवश्यक है। रोपण के समय 10–12 टन सड़ी गोबर की खाद मिट्टी में मिलाएं।

बीज की मात्रा

प्रति एकड़ के लिए 2100 या 21,000 गाँठों का प्रयोग करें।

बीज उपचार

बिजाई से पहले गाँठों को थीरम 0.3 प्रतिशत या एमीसान 0.2 प्रतिशत या बेनलेट 0.2 प्रतिशत या बाविस्टिन 0.2 प्रतिशत के साथ उपचार करें, ताकि मिट्टी से होने वाली बीमारियों से बचाया जा सकें।

बिजाई का समय

बिजाई के लिए मार्च–अप्रैल महीने का समय उचित है।

दूरी

रोपण के लिए 45 सेमी फासले पर 90 सेमी चौड़े नर्सरी बेड तैयार करें।

बीज की गहराई

गाँठों को 5–7 सेमी गहराई पर मिट्टी में बोयें।

प्रजनन

इस फसल का प्रवर्धन गाँठों द्वारा किया जाता है। 1.5–2.0 सेमी व्यास और 30 ग्राम से ज्यादा भार वाली गाँठे बुवाई के लिए प्रयोग की जाती हैं। एक तुड़ाई के लिए, एक साल पुरानी फसल की 1 या 2 गाँठे या गाँठों के एक गुच्छे को एक जगह पर बोयें और एक साल से ज्यादा पुरानी फसल की 1 या 2 गाँठें एक जगह पर बोयें। दोहरी तुड़ाई के लिए एक साल पुरानी फसल की गाँठ ही बोयें।

खाद

रजनीगंधा की खेती के लिए खाद किग्रा प्रति एकड़ क्रमशः यूरिया, सिंगल सु.फा. व म्यूरेट ऑफ पोटाश 640:250:60 के अनुपात में दें।

खेत की तैयारी

20–25 टन सड़ी गोबर की खाद डालें। उर्वरक के रूप में फॉस्फोरस 40 किग्रा (सिंगल सुपर फॉस्फेट 250 ग्राम), पोटाश 40 किग्रा (म्यूरेट ऑफ पोटाश 60 किग्रा) प्रति एकड़ मे बिजाई के समय डालें।

फसल के विकास के समय, नाइट्रोजन 296 किग्रा यूरिया 640 किग्रा प्रति एकड़ मे डालें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई के समय डालें और बाकी की बची हुई नाइट्रोजन की मात्रा एक महीने के फासले पर अगस्त तक डालें। खादें डालने क बाद, सिंचाई अवश्य करे।

खरतपवार नियंत्रण

खेत को खरपतवार मुक्त करने के लिए 3–4 बार हाथों से गुड़ाई करें। नए पौधे लगाने के तुरंत बाद और रोपण के 45 दिनों बाद, ऐट्राजिन 0.6 किग्रा प्रति एकड़ या ऑक्सीफ्लोरेफेन 0.2 किग्रा प्रति एकड़ या पेंडीमैथलीन 800 मिली प्रति एकड़ को 200 लीटर पानी में मिलाकर खरपतवार के उगने से पहले पूरे खेत में छिड़काव करें।

सिंचाई

गाँठो के अंकुरित होने तक कोई सिंचाई न करें। अंकुरण होने के बाद और 4–6 पत्ते निकलने पर हफ्ते में एक बार सिंचाई करें। मिट्टी और जलवायु के आधार पर 8–10 सिंचाइयाँ करनी आवश्यक है।

पोषक तत्वों की कमी और उपचार

नाइट्रोजन की कमी

कमी होने के कारण, डंडियाँ और फूलों की पैदावार कम हो जाती है, पत्तों पर पीले–हरे रंग के हो जाते हैं।

फास्फोरस की कमी

फास्फोरस की कमी होने पर, ऊपर वाले पत्ते गहरे हरे रंग के और निचली तरफ के पत्ते जामुनी रंग के हो जाते हैं। इसके लक्षण विकास का रूक जाना और फूलों की गिनती कम होना आदि।

कैल्शियम की कमी

इसकी कमी के कारण डंडियों में दरार पड़ जाती है। कैल्शियम की ज्यादा कमी होने से कली गल जाती है।

मैग्नीशियम की कम

इसके कारण पुराने पत्तों पर पीलापन देखा जा सकता है।

आयरन की कमी

इसके कारण नए पत्तों पर पीलापन देखा जा सकता है।

बोरोन की कमी

इसके कारण फूलों का विकास रूक जाता है, पत्तों में दरारें पड़ जाती हैं और पत्तों का आकार बेढंगा हो जाता है।

मैंगनीज की कमी

इसकी कमी के कारण पत्तों की निचली सतह की नसों पर पीलापन देखा जा सकता है।

पौधे की देखभाल

बीमारियाँ और रोकथाम

तना गलन

यह सक्लेरोशियम रोलफसाई नामक कवक के कारण होता है। इसके बीमारी के कारण पत्तों की सतह पर फंगस दिखाई देती है। हरे रंग के धब्बे देखे जा सकते हैं और पत्ते झड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए ब्रैसिकोल 20 प्रतिशत 12.5 किग्रा प्रति एकड़ मिट्टी में डालें।

धब्बे और झुलसा रोग

यह बीमारी मुख्य तौर पर बरसात के मौसम में फैलती है। इसके कारण फूलों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं और फूल के सारे भाग सूख जाते है। इसकी रोकथाम के लिए कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के फासले पर स्प्रे करें।

मुरझाना

इस बीमारी के कारण पत्ते लटक जाते हैं। पत्ते पीले रंग के हो जाते हैं और अंत में सूख जाते हैं यह धीरे–धीरे सारे पौधे को प्रभावित करता है। प्रभावित तने और पत्तों पर रूई जैसी मोटी परत बन जाती है।

हानिकारक कीट और रोकथाम

चेपा

यह छोटे कीट होते हैं जो फूल की कलियों और नए पत्तों को खाकर नुकसान करते हैं। चेपे की रोकथाम के लिए मैलाथियान 0.1 प्रतिशत की दर से 3 मिली को प्रति लीटर पानी में मिलाकर 15 दिनों के अन्तराल पर प्रति एकड़ में छिड़काव करें।

थ्रिप्स

यह फूल की डंठल, पत्तों और फूलों को खाकर पौधे को नुकसान करता है। थ्रिप्स की रोकथाम के लिए मैलाथियान 0.1 प्रतिशत 3 मिली को प्रति लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ में स्प्रे करें।

भुंडी

यह पौधे के पत्तों और शाखा को प्रभावित करती है। यह पत्तों और जड़ों को शिखर से खाकर पौधे को नुकसान पहुँचाती है। इसकी रोकथाम के लिए बेनजीन हेक्साक्लोराइड 10 प्रतिशत की दर से मिट्टी में मिलाएं।

टिड्डे

यह नए पत्तों और फूल की कलियों को खाते हैं जिससे पत्तियों और फूलों को नुकसान होता है। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 0.1 प्रतिशत या क्विनलफोस 0.05 प्रतिशत या कार्बरिल 0.2 प्रतिशत की दर से 6 ग्राम को प्रति लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ में छिड़काव करें।

कली छेदक

यह मुख्य तौर पर कलियों पर अंडे देकर उन्हें प्रभावित करते हैं फिर लार्वा फूल की कलियों को खाता है जिससे कलियों में छेद हो जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए कार्बारिल 0.2 प्रतिशत 6 ग्राम को प्रति लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ में छिड़काव करें।

(शेष पृष्ठ 16 पर)

जावा घास की खेती (सिट्रोनेला): आय का नया साधन

सचि गुप्ता* एवं डॉ. डी. राम**

जावा घास को जावा सिट्रोनेला के नाम से जाना जाता है, यह बहुवर्षीय सुगन्ध पौधा है। इसका तेल सुगन्ध प्रसाधन सामग्री के उत्पादन में प्रयोग किया जाता है। इसका तेल जिरेनियॉल, सिट्रोनेलाल एवं जिरेनियॉल एसीटेट का प्रमुख स्रोत है। भारत में लगभग 8500 हेक्टेयर में इसकी बुवाई की जाती है। देश के उत्तर पूर्वी क्षेत्र पूरी पैदावार का लगभग 80 प्रतिशत उत्पादन करते हैं। वर्तमान समय में सिट्रोनेला तेल की कीमत लगभग 1000 से 1200 रूपये किग्रा है। लागत पर खर्च कम आता है इसलिए किसान को शुद्ध लाभ 50–70 प्रतिशत होता है। इस फसल में कीट एवं बीमारियों का प्रकोप बहुत कम होता है। अंतः जावा सिट्रोनेला की उन्नत खेती से किसानों की आय परंपरागत फसल से हटकर ज्यादा हो सकती है।

खेत की जुताई

अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि जावा घास की खेती के लिए सर्वोत्तम है, परंतु दोमट एवं बलुई भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है। मृदा पीएच 6.0–7.5 तक उपयुक्त है। सिट्रोनेला एक लम्बे अवधि की फसल है जो लगातार 5 वर्ष तक उत्पादन देती है। अतः अच्छी पौध वृद्धि और ज्यादा उपज के लिए खेत की अच्छी तरह जुताई आवश्यक है। खेत की 2–3 बार गहरी जुताई कर पाटा से समतल करके छोटी–छोटी क्यारियों में विभक्त कर लेते हैं। फसल लगाने के पूर्व 20–25 किग्रा क्लोरपायरीफॉस प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिला देना चाहिए जिससे दीमक आदि कीटों का प्रकोप रोका जा सकता है।

बुवाई हेतु बीज

बुवाई स्लिप्स से की जाती है। स्लिप्स बनाने के लिए 1 वर्ष या उससे पुरानी फसल से जुट्ठों को निकाल कर उनमें से एक एक स्लिप्स अलग अलग कर ली जाती है। इसके बाद स्लिप्स के ऊपर के पते को हटा कर तथा नीचे के सूखे हुए पत्तों को अलग कर दिया जाता है। इस प्रकार से स्लिप्स तैयार हो जाती है। स्लिप्स लगाते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इसका जमाव 80 प्रतिशत हो पाता है।

प्रजातियाँ

जावा घास की प्रचलित प्रजातियाँ मंजूषा एवं मंदाकिनी हैं, परंतु अधिक तेल वाली दो अन्य प्रजातियाँ बायो–13 एवं क्लोन–71–1 भी विकसित हो चुकी है। जलपल्लवी, सिम–जीवा, जोर लेब सी–5, जोर लेब सी–2, इत्यादि।

बोने की विधि

मानसून आने से पूर्व ही खेत को जोतकर अच्छी प्रकार से तैयार कर लेते हैं। मानसून प्रारंभ होते ही, स्लिप्स जिसमें 2–3 किल्ले हो, उन्हें 6–8 सेमी गहराई पर 45 गुणा 45 सेमी या 60 गुणा 45 सेमी की दूरी पर तैयार खेत में लगा देते हैं।

स्लिप की रोपाई फरवरी–मार्च अथवा जुलाई अगस्त में करना चाहिए। रोपने के बाद यदि वर्षा न हो तो पानी लगा देना भी आवश्यक है। समुचित पानी की व्यवस्था में इसे उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र में फरवरी–मार्च में भी रोपा जा सकता है। लगभग 8–10 दिन में पौधों में नई पत्तियाँ निकलने लगती हैं।

इसे भी दें खाद एवं उर्वरक

जावा घास के लिए 120 किग्रा नत्रजन 40 किग्रा फॉस्फोरस पेण्टा ऑक्साइड तथा पोटेशियम ऑक्साइड प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। नत्रजन की चौथाई मात्रा पेण्टा ऑक्साइड तथा पोटैशियम ऑक्साइड की पूरी मात्रा रोपाई से पहले ही खेत में मिला देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा तीन बार में प्रत्येक कटाई के बाद देनी चाहिए। पोषक तत्वों की यह मात्रा प्रति साल देना आवश्यक है। कमजोर भूमि में 200 किग्रा नत्रजन प्रति हेक्टेयर चार बार में देनी चाहिए। क्लोरोसिस होने पर 0.25 प्रतिशत फेरस

*पी.एच.डी. छात्र, **प्राध्यापक, उद्यान विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

सल्फेट का घोल 15 दिन के अंतर से 2–3 बार छिड़कना चाहिए।

जलवायु और सिंचाई

जावा सिट्रोनेला शाकीय प्रकृति की फसल है जिसके कारण इसको काफी मात्रा में जल की आवश्यकता नहीं होती। पहली सिंचाई पौध रोपण के तुरन्त बाद तथा बाद की सिंचाइयाँ आवश्यकतानुसार करनी चाहिए। परन्तु उत्तर भारत में दिसम्बर से जून तक लगभग 6–8 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खरतपवार नियंत्रण

पहली कटाई तक 2–3 बार खुरपी से निकाई–गुड़ाई कर देनी चाहिए जिससे खरपतवार फसल के पौधों को न दबा लें। खरपतवार नियंत्रण हेतु जावा घास के आसन के बाद बचे व्यर्थ पदार्थ को 3 टन प्रति हेक्टेयर एवं 1.5 किग्रा डाई यूरोन प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत में मिलाया जा सकता है। बाद में प्रत्येक कटाई के बाद एक निकाई करते रहने से जावा घास की वृद्धि अच्छी होती है।

रोग एवं उपचार

- जावा घास में कभी–कभी झुलसा रोग लग जाता है जिसमें पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं। यह इस फसल की मुख्य समस्या है। यह रोग कलबुलेरिया क्यूरियूरिया एण्ड्रोफोनिस नामक फफूँदी के कारण उत्पन्न होता है। इन बीमारियों में पत्तियों का अग्र भाग तथा सिरे काले–भूरे रंग के हो जाते हैं तथा पत्तियाँ सूखने लगती हैं। इस रोग के नियंत्रण हेतु डायथेन एम–45 तथा डायथेन जेड 78 का 10 से 15 दिन के अंतर पर छिड़काव करना चाहिए।
- दक्षिण भारत में एन्थ्रोक्नेज बीमारी अधिक प्रकोप करती है। बचाव हेतु डाईथायोकार्बोमेट का प्रयोग करना चाहिए।

कटाई

जावा घास की पहली कटाई रोपाई के लगभग 120 दिन बाद करनी चाहिए। परंतु अन्य कटाई 3 माह के अंदर पर की जाती है। जावा घास चार से पाँच वर्ष तक अधिक लाभ देती है, परन्तु इसके बाद उत्पादन कम होने लगता है भूमि से 15 सेमी ऊपर से पौधों की कटाई करनी चाहिए।

उपज एवं आमदनी

सिट्रोनेला की फसल से वर्ष भर में औसतन चार कटाइयों में लगभग 200–250 किग्रा/हेक्टेयर/वर्ष सुगंधित तेल का उत्पादन होता है। इस प्रकार यह फसल प्रथम वर्ष में लगभग 40–45 हजार रूपये प्रति हेक्टेयर का सीधा लाभ देते हैं। जबकि आने वाले वर्ष में लाभ की मात्रा लगभग दोगुनी (1,60,000–2,00,000/वर्ष) हो जाती है।

प्रसंस्करण

फसल कटाई के पश्चात पत्तियों के अतिरिक्त जल को समाप्त करने के लिए उन्हें छाया में थोड़ा (एक दिन) सुखा लिया जाता है। नम मौसम में पत्त्यिों को रैक पर सुखाया जाना चाहिए जिससे उनमें फफूँदी न लग सके। सुखाने से आसवन कम समय में हो जाता है। सिट्रोनेला की पत्तियों से तेल वाष्प आसवन या जल आसवन विधि द्वारा निकाला जाता है। सूखी पत्तियों को चुनकर अलग कर देने के पश्चात शेष घास को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर आसवन करने से अधिक तेल मिलता है। आसवन कक्ष में वाष्प 40 से 100 पाउण्ड/इंच के दबाव पर छिद्रित कुंडलियों के द्वारा प्रेषित की जाती है। ●

(पृष्ठ 14 का शेष)

फसल की कटाई

बिजाई के 3–3.5 महीने बाद फूलों की तुड़ाई की जाती है। इसके फूल खिलने का समय अगस्त– सितम्बर महीना होता है। इसकी तुड़ाई निचले 2–3 फूल के खिलने पर करनी चाहिए। डंडियों को तीखे चाकू से काट दें। फ्लावर से पहले साल में इसकी औसतन पैदावार से 5 लाख फूल प्रति हेक्टेयर की और अलग–अलग फूलों से 10.5 टन/हेक्टेयर की है। फूलों की तुड़ाई के बाद, फूलो से डंठले अलग कर दी जाती हैं और फूलों को बोरियों में या सूती कपड़े में लपेटकर छाव में रख देते हैं। ●

तरबूज की खेती कैसे करें?

जितेन्द्र कुमार* एवं डॉ. गुलाब चन्द्र यादव**

यह एक फल के तौर पर प्रयोग किया जाता है और इसमें 92 प्रतिशत पानी के साथ–साथ प्रोटीन, मिनरल और कार्बोहाइड्रेटस होते हैं। जापान में तरबूज वर्गाकार काँच के डिब्बों में होने के कारण वर्गाकार आकार के होते हैं। ज्यादातर तरबूज महाराष्ट्र, कर्नाटका, तमिलनाडु, पंजाब, राजस्थान, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में लगाया जाता है।

संक्षिप्त इतिहास

माना जाता है कि तरबूज की उत्पत्ति अफ्रीका के कालाहारी रेगिस्तान में हुई थी। इसकी खेती मिस्र और पश्चिम एशिया में 2000 बीसी के आसपास हुई थी और वहाँ से यह इटली, ग्रीस आदि भूमध्य सागर के साथ अन्य देशों में फैल गया था। तरबूज भारत में 4वीं शताब्दी ईसवीं में लाया गया था और रूस में हजारों वर्षों से खेती के अधीन है।

खाद्य मूल्य

तरबूज में कोलेस्ट्रॉल और सोडियम बहुत कम मात्रा में होता है, यह मैग्नीशियम का बहुत अच्छा स्रोत है और फास्फोरस, मैंग्नीज और जस्ता का एक अच्छा स्रोत है। यह एक शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट है सौ ग्राम तरबूज के फल में 91.5 ग्राम पानी, 7.2 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 0.6 ग्राम प्रोटीन, 0.5 ग्राम फाइबर, 0.2 ग्राम वसा, 8.0 मिग्रा कैल्शियम, 0.2 मिग्रा लोहा, 11.0 मिग्रा मैग्नीशियम।

उपयोग

तरबूज का आमतौर पर मिठाई फल के रूप में सेवन किया जाता है, हालांकि इसके फल को कैंडी बनाने और अचार बनाने में इसके छिलके के लिए भी संसोधित किया जाता है। तरबूज को फलों का उपयोग सलाद के रूप में भी किया जाता है।

मिट्टी

तरबूज उपजाऊ और अच्छे जल निकास वाली जमीन में उगाया जाता है। इसकी लाल रेतली और दरमियानी भूमि में बढ़िया पैदावार होती है। बुरे जल निकास वाली जमीनों में इसकी खेती नहीं की जाती। अच्छी पैदावार के लिए फसल चक्र अपनाना चाहिए। पी एच की मात्रा 6–7 में हो।

जलवायु

तरबूज एक गर्म मौसम की फसल है जो मुख्य रूप से दुनिया के उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाई जाती है। जब दिन का तापमान 20 डिग्री सेल्सियस होता है। प्रारंभिक विकास के दौरान 25–30 डिग्री सेल्सियस और फल विकास और परिपक्वता के दौरान 30–35 डिग्री सेल्सियस के बीच दिन का तापमान अच्छा होता है। तरबूज में अच्छी फलों की गुणवत्ता और उच्च शर्करा (टीएसएस) सामग्री के लिए फल के विकास के दौरान शुष्क मौसम महत्वपूर्ण है।

*शोध छात्र, **सह प्राध्यापक, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

प्रसिद्ध किस्में

शिपर (परिचय, यूएसए)

इसके फल एक विशेषतया त्रिकपर्णी खिलने के साथ गोल होते हैं और विपणन योग्य परिपक्वता तक पहुँचने में 85–90 दिन लगते हैं। औसत टीएसएस सामग्री 8–9 प्रतिशत है। इसके बीज एक समान और हल्के भूरे रंग के होते हैं। इसकी पैदावार लगभग 325 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है।

अर्का माणिक (आईआईएचआर, बैंगलोर)

इस आईआईएचआर 21 और क्रिमसन स्वीट के बीच के क्रॉस से विकसित किया गया है, जो यूएसए का एक परिचय है। इसके फल हरे रंग के छिलके और गहरे रंग की धारियों वाले अंडाकार होते हैं।

सुगर बेबी (परिचय, यूएसए)

इसकी औसतन पैदावार 72 कुन्तल प्रति एकड़ होती है। इसके फल का छिलका गहरे लाल रंग का होता है और इसमें सुक्रोस की मात्रा 9–10 प्रतिशत होती है।

दुर्गापुर मीठा

विपणन योग्य परिपक्वता तक पहुँचने में लगभग 125 दिन लगते हैं। औसतम उपज 400–450 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

जमीन की तैयारी

गहरी जुताई के बाद खेत को समतल करें। तरबूज की बुवाई सीधी पक्तियों में की जाती है।

बुवाई का समय

उत्तर भारत में बुवाई नवंबर के शुरू में की जाती है। मुख्य भूमि में फरवरी के अंत में बुवाई की जाती है। बीज की बुवाई पॉलिथीन की थैलियों में भी का जा सकती है और यह विधि कस्तूरी के नीचे बताई गई है। दक्षिण और मध्य भारत में, बुवाई अक्टूबर में की जाती है।

बीज दर

बीज दर 3.5–5.0 किग्रा प्रति हेक्टेयर से भिन्न होती है और बीज 2.0–2.0 सेमी की गहराई पर रखे जाते हैं।

बीज का उपचार

बीज को बोने से पहले 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा से उपचारित करें। रसायनिक उपचार के बाद बीज को 4 ग्राम ट्राईकोडर्मा विरडी से उपचार करें। बीज को छाँव में सुखाएं और बुवाई करें।

अंतर

रोपण की विधि कस्तूरी के समान हैं। रिक्त 3.0–3.5 मीटर गुणा 60–90 सेमी पर बनाए रखी जाती ह।

खाद और उर्वरक

भारत के उत्तर पश्चिम भाग के लिए, पीएयू, लुधियाना 60 किग्रा नाइट्रोजन और 40 किग्रा प्रत्येक फास्फोरस और पोटाश प्रति हेक्टेयर।

सिंचाई

गर्मियों में सप्ताह बाद पानी लगाएं। फसल पकने पर जरूरत के अनुसार पानी लगाएं। पानी लगते समय मेंड़ों को गीला न होने दें, विशेष कर फूलों और फलों को पानी न लगने दें। भारी जमीनों में लगातार पानी न

लगाएं। ज्यादा मिठास और अच्छे स्वाद के लिए फसल काटने पर 3–6 दिन पहले पानी लगाएं।

खरपतवार नियंत्रण

शुरूआत में क्यारियों को खरपतवारों से मुक्त रखें। खरपतवार की रोकथाम के बिना 30 प्रतिशत पैदावार कम हो जाती है। बीज बोने से 15–20 दिनों के बाद गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवार की रोकथाम के लिए 2 या 3 गुड़ाई की जरूरत पड़ती है।

पौधे की देखभाल

हानिकारक कीट और उनकी रोकथाम

फल मक्खी

यह एक नुकसानदायक कीड़ा है। मादा अपने अंडे फल में देती है। सूण्डियाँ फल को खाने लग जाती हैं और फल गल जाता है। प्रभावित फल को नष्ट कर दें। नुकसान के लक्षण दिखाई देने पर 50 ग्राम नीम की निंबोलियों का घोल प्रति लीटर पानी में मिला कर छिड़काव 3 से 4 बार 20 मिली फालिडाल + 100 ग्राम गुड़ प्रति 10 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिनों के बाद छिड़काव करें।

कोढ़ रोग

इस बीमारी के कारण पत्ते गल जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा बीज का उपचार करें। यदि खेत में नुकसान दिखे तो मैनकोजेब 400 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 400 ग्राम को 200 लीटर पानी में डालकर छिड़काव करें।

फसल की कटाई

जब फल पूरी तरह से विकसित होते हैं और पक जाते हैं। टेंड्रिल का सूखना, ग्राउड स्पॉट के रंग को हरे से पीले में बदलना तरबूज में परिपक्वता को इंगित करता है। तेज चाकू का उपयोग करके कटाई की जाती है।

उपज

परिस्थितियों के आधार पर, तरबूज की उपज 150–220 कुन्तल प्रति हेक्टेयर से भिन्न होती है। ट्राई आयोडोबेंजोइक एसिड (टीआईबीए) 25–50 पीपीएम 2 और 3 लीफ स्टेज पर लगाने से मादा फूलों का उत्पादन बढ़ता है, जिससे फल की अधिक पैदावार होती है। मधुमक्खी, अन्य कुकुरबिटेसी की तरह, फल सेट और फल की उपज में सुधार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

तरबूज में कटाई के बाद

उच्च बाजार मूल्य प्राप्त करने के लिए समान फलों का आकार भी महत्वपूर्ण है। तरबूज फलों को अलग–अलग पैकिंग के बिना ट्रकों में ले जाया जाता है। तरबूज के फलों को कमरे के तापमान पर 7–10 दिनों के लिए संग्रहीत किया जा सकता है। पूरे फल के लिए आदर्श भंडारण तापमान 12–13 डिग्री सेल्सियस और 90 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता है और कटे हुए फल के लिए 2–4 डिग्री सेल्सियस है।●

संतुलित उर्वरक का प्रयोग

लगातार फसल उगाने से मृदा के स्वास्थ्य में हो रही गिरावट के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में स्थिरता की स्थिति हो गयी है। समय रहते खेत की मिट्टी की दशा को सुधारने एवं उर्वरकों का संतुलित मात्रा में प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि किसान भाई अपने खेत की मिट्टी की जाँच करवाने के पश्चात संस्तुत मात्रा में संतुलित उर्वरक का प्रयोग करें तथा मृदा स्वास्थ्य कार्ड अवश्य बनवायें। फसल अवशेष को न जलाएं उसका प्रबन्ध कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाएं। खेत को खाली न छोड़ें बल्कि हरी खाद हेतु सनई व ढैचा पलटकर हरी खाद बनायें। जीवांशिक खादों का अधिक से अधिक प्रयोग कर मृदा स्वास्थ्य को बढ़ाने पर बल दें।

पीली हल्दी की उत्पादन तकनीकी

राजीव कुमार सिंह*, पंकज कुमार सिंह** एवं डॉ. प्रेमलता श्रीवास्तव***

हल्दी का पौधा 2–3 फीट लम्बा तथा 6–7 इंच तक चौड़ा, पत्र–वृत आयताकार भालाकार तथा आगे की कुछ नोंकादार होते हैं। इसकी मूल जड़ में अदरक के समान कंद बैठते हैं जिन्हें हल्दी कहते हैं। हल्दी खेती छायादार स्थानों में भी की जा सकती है। अतः कृषक हल्दी की खेती अपने बागानों में भी कर सकते हैं। इस प्रकार बाग से होने वाले आर्थिक लाभ के साथ–साथ हल्दी की खेती कर अतिरिक्त लाभ अर्जित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त हल्दी को लाल मिर्च, सब्जियों, मक्का एवं मोटे अनाज जैसे रागी आदि के साथ मिश्रित फसल के रूप में भी अपनाकर अच्छा लाभ लिया जा सकता है। हल्दी शरीर के अन्दर बीमारियों से लड़ने के लिए प्रतिरोधक क्षमता विकसित करने के साथ–साथ कॉलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रित करने एवं नसों में रक्त के जमाव को खोलने में भी सहायक होती है। भारत में हल्दी की खेती, पैदावार एवं निर्यातक देशों में अग्रणी है। भारत वर्ष में हल्दी सौंदर्य प्रसाधनों, मांगलिक कार्यों के साथ–साथ धार्मिक अनुष्ठानों एवं देव पूजन आदि में भी अति महत्वूपर्ण है। जिस प्रकार खाद्यान्न फसलों में धान एवं गेहूँ का महत्व है उसी प्रकार मसाले वाली फसलों में हल्दी का महत्वपूर्ण स्थान है।

बढ़ते शहरीकरण, घटती जोत एवं बढ़ते आर्थिक दबाव के कारण दूसरे व्यवसायों की तरफ कृषकों को पलायन रोकने हेतु वैकल्पिक कृषि प्रणालियों की आवश्यकता महसूस होने लगी। पिछले कुछ वर्षों में ऐसा देखा गया कि बहुत से किसान खेती से पलायन कर रहे हैं क्योंकि इससे लाभ कम होता जा रहा है। कृषको का कृषि से पलायन रोकने हेतु कृषि में वैकल्पिक एवं लाभप्रद आधारित फसल प्रणालियाँ विकसित करनी होगी। जहाँ से कृषक भूमि के एक ही हिस्से से अधिक आर्थिक लाभ ले सकें तथा कृषक अपनी आर्थिक जरूरतों को अपने पास उपलब्ध कृषि योग्य भूमि से ही पूर्ण कर सकें। इस दिशा में हल्दी एक महत्वपूर्ण फसल है क्योंकि इसकी खेती छायादार स्थानों में भी की जा सकती है। अतः कृषक हल्दी की खेती अपने बागानों में भी कर सकते हैं। इस प्रकार से बाग से होने वाले आर्थिक लाभ के साथ–साथ हल्दी की खेती कर अतिरिक्त लाभ अर्जित किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त हल्दी को लाल मिर्च, सब्जियों, मक्का एवं मोटे अनाज जैसे रागी आदि के साथ मिश्रित फसल के रूप में भी अपनाकर अच्छा लाभ लिया जा सकता है। हल्दी को संस्कृत में हरिद्रा कहते हैं। भारत वर्ष में हल्दी सौंदर्य प्रसाधनों, मांगलिक कार्यों के साथ–साथ धार्मिक अनुष्ठानों एवं देव पूजन आदि में भी अति महत्वपूर्ण है। जिस प्रकार खाद्यान्न फसलों में धान एवं गेहूँ का महत्व है उसी प्रकार मसाले वाली फसलों में हल्दी का महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में जलवायु विभिन्नता होने के कारण भोजन व्यवस्थायें भी भिन्न–भिन्न प्रकार से हैं लेकिन कृषि में तकनीकी बदलाव के बाद भी हल्दी की सभी क्षेत्रों में माँग इसके महत्व को दर्शाती है। हल्दी का प्रयोग केवल मसालों के रूप में ही नहीं अपितु डाई, दवाओं एवं सौन्दर्य प्रसाधनों में भी किया जाता है। इनके अतिरिक्त अब उत्तर प्रदेश में भी हल्दी की खेती का प्रचलन बढ़ रहा है। आंध प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, गुजरात, मेघालय, महाराष्ट्र, आसाम, झारखंड इत्यादि हल्दी पैदा करने वाले प्रमुख राज्य हैं।

उपरोक्त सभी राज्यों में आंध्र प्रदेश अकेला ऐसा राज्य है जहाँ भारत में हल्दी की खेती में प्रयोग होने वाले कुल भू–भाग का 35 प्रतिशत क्षेत्रफल आता है तथा देश में पैदा होने वाले कुल हल्दी उत्पादन का 47 प्रतिशत यहाँ ही पैदा होता है। एक आँकड़े के अनुसार

*वि.व.वि., ***वि.व.वि.,गृह विज्ञान, कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहाँव, बलिया, **वि.व.वि., कृषि विज्ञान केन्द्र, मसौधा, अयोध्या, उ.प्र.

वर्ष 2006–07 में देश में कुल 1.86 लाख हेक्टेयर भूमि में 8.37 लाख टन हल्दी की पैदावार हुई थी। इस फसल से अच्छी आमदनी प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

जलवायु एवं भूमि

हल्दी मुख्यतः विभिन्न कटिबंधीय क्षेत्रों तथा समुद्र स्तर से लगभग 1500 मीटर से ऊपरी क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। इसकी खेती के लिए गर्म तथा आर्द्रता वाला मौसम उपयुक्त होता है। इन क्षेत्रों का तापमान 200–350 से एवं वार्षिक वर्षा लगभग 1500 मिमी अथवा अधिक होना चाहिए। बरानी अथवा सिंचित दशाओं में इसे किसी भी उपजाऊ भूमि में उगाया जा सकता है परन्तु इसकी खेती के लिए रेतीली अथवा बलुई दोमट और मटियार दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है भूमि में उपजाऊपन तथा पानी के निकास का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। भूमि का पी.एच. लगभग 4.5 से 7. 5 के बीच तथा जैविक जीवांश की प्रचुर मात्रा में होनी चाहिए।

उन्नत किस्में

देश में हल्दी की बहुत सी प्रमुख किस्में उपलब्ध हैं तथा अलग–अलग क्षेत्रों में उगाई जाने वाली हल्दी की कुछ किस्मों के नाम फसल की अवधि एवं औसत पैदावार सारिणी–1 में दी है।

खेत की तैयारी

मानसून बारिश के पूर्व ही खेत की तैयारी शुरू कर देनी चाहिए। इसके लिए एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से व हैरो से जुताई करनी चाहिए। खेत में घास–फूस निकालकर पाटा लगाकर समतल बना लेना चाहिए। इसके पश्चात 1 मीटर चौड़ी तथा 15 सेमी ऊँची ऊपरी क्यारी (बेड) बना लेना चाहिए और ध्यान रखना चाहिए कि ऊपरी क्यारियों के बीच की दूरी 50 सेमी के लगभग होनी चाहिए।

बीज की मात्रा एवं बीजोपचार

हल्दी की बुवाई हेतु मातृ कंद या बाजु कन्द अथवा दोनों प्रकार के कंदों का प्रयोग करते हैं। बीज के लिए 20–25 ग्राम के मातृ कन्द अथवा 15–20 ग्राम के बाजू कन्द का प्रयोग करना चाहिए। बुवाई हेतु कन्दों का चुनाव करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इन कन्दों से कम दो आखें अवश्य हो। एक हेक्टेयर भूमि में बुवाई हेतु 6 से 8 कुन्तल कन्दों की जरूरत पड़ती

सारिणी–1

हल्दी की किस्में, फसल अवधि एवं उपज

किस्में	फसल अवधि (दिनों में)	औसत उपज (टन/हे.)
सुवर्णा	200	17.4
सुगना	190	29.3
सुदर्शना	190	28.8
नरेन्द्र हल्दी–1	200–210	30–35
नरेन्द्र हल्दी–2	205–210	20–25
सी.ओ.–1	285	30.0
बी.सी.आर.–1	285	30.0
कृष्णा	240	9.2
सुगन्धम	210	15.0
रोमा	250	20.7
सुरोमा	255	20.0
रंगा	250	29.0
रश्मि	240	31.3
राजेन्द्र सोनिया	225	42.0
नरेन्द्र हल्दी–1	205–210	25–30
नरेन्द्र हल्दी–98	210	35–37

है। खेत में लगाने से पहले मातृ या बाजू कन्दों को डाईथेन एम–45 के 0.25 प्रतिशत घोल में 30 मिनट तक डुबोकर उपचारित करते हैं। इसके लिए 10

लीटर पानी में 25 ग्राम डाईथन एम–45 एवं 10 मिली मैलाथियान मिलाकर घोल बना लेना चाहिए। इस घोल में बुवाई के लिए प्रयोग की जाने वाली गाठों को 30 मिनट तक डुबोकर रखना चाहिए। इसके पश्चात गाँठों को निकालकर बुवाई हेतु प्रयोग करना चाहिए। एक बार तैयार घोल को तीन बार से ज्यादा बार हल्दी की गाँठों को उपचारित करने हेतु प्रयोग नहीं करना चाहिए।

फसल चक्र प्रणाली

हल्दी की खेती को फसल चक्र प्रणाली से भी किया जा सकता है। हल्दी के साथ हम गन्ना, केला, मिर्च, प्याज, लहसुन, दालें, मक्का व इसे सब्जियों के साथ मिश्रित फसल के रूप में भी उगा सकते हैं। पश्चिमी बंगाल में हल्दी की आम, जैक फल, सुपारी नारियल और लीची के साथ खेती करते हैं। गुजरात में हल्दी के खेती को अदरक और मिर्च इत्यादि सब्जियों के साथ बोया जाता है। हल्दी की खेती फसल चक्र प्रणाली के साथ हर किस्म की फसल की खेती कर सकते हैं चाहे वो मोटे अनाज हो, दाले या बागवानी फसल हों। हल्दी को हर फसल के साथ उगाया जाता है।

बुवाई की विधि

हल्दी लगाने के लिए मुख्यतः तीन विधियाँ अपनाई जाती हैं–

समतल भूमि में मेड़ों पर, ऊँची उठी हुई क्यारियों पर।

उपजाऊ बलुई दोमट एवं अच्छे जल निकास वाली भूमि होने की दशा में समतल भूमि में भी हल्दी की खेती कर अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। समतल भूमि में हल्दी लगाने के लिए 4 से 8 मीटर लम्बी एवं 2 से 4 मीटर चौड़ी क्यारियाँ बनाकर पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 से 60 सेमी एवं कन्द से कन्द की दूरी 25 सेमी रखते हुए हल्दी की गाँठों की बुवाई सीधे भूमि में कर देते हैं। मेड़ विधि में मेड़ों की ऊँचाई 25–30 सेमी की होनी चाहिए। मेड़ से मेड़ की दूरी एवं पौधे से पौधे की दूरी पूर्ववर्ती हल्दी की खेती मेड़ों अथवा ऊपरी क्यारी विधि द्वारा किया जाना उपयुक्त होता है। ऊँची उठी हुई क्यारियों में क्यारियों की लम्बाई 3 से 5 मीटर तथा चौड़ाई 1.5 मीटर ज्यादा सुविधा जनक होती है दो क्यारियों के मध्य 40 सेमी जगह खाली छोड़ना उपयुक्त होता है। ऊपरी क्यारी विधि में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी एवं पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी रखनी चाहिए। हल्दी की गाँठों की बुवाई करते समय इस बात पर विशेष ध्यान रखना चाहिए कि गाँठों में आँखें ऊपर की ओर होनी चाहिए तथ इसकी गहराई 4–5 सेमी से अधिक न होने पाये। बुवाई के पश्चात कंदों को मिट्टी से अच्छी प्रकार से ढक देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

हल्दी को अन्य फसलों की अपेक्षा पोषक तत्वों की अत्यधिक आवश्यकता होती है जोकि सामान्य भूमि से पूरी नहीं हो पाती है। इसके साथ–साथ अधिक उपज पाने के लिए भी समुचित एवं संतुलित मात्रा में उर्वरक डालना चाहिए। इसके लिए भूमि परीक्षण कराया जाना ज्यादा उपयुक्त होता है। भूमि परीक्षण नहीं करा पाने की दशाा में वैज्ञानिकों द्वारा संस्तुत मात्रा में 30–40 टन/हे. की दर से गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय डालनी चाहिए। इसके अतिरिक्त 60 किग्रा नाइट्रोजन, 50 किग्रा फास्फोरस तथा 120 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से वैज्ञानिकों द्वारा संस्तुत विभिन्न तरीकों एवं समयों पर करना चाहिए। जिंक का

सारिणी–2
हल्दी में खाद प्रयोग के समयान्तराल

प्रयोग के तरीके	नाइट्रोजन	फास्फोरस	पोटाश	गोबर की खाद
बुवाई से पूर्व भूमि में प्रयोग	–	50 किग्रा	–	40 टन
40 दिन बाद	30 किग्रा	–	60 किग्रा	–
90 दिन बाद	30 किग्रा	–	60 किग्रा	–

5 किग्रा प्रति हेक्टेयर (सारिणी–2) की दर से बुवाई के समय प्रयोग लाभकर होता है।

हल्दी की बुवाई के तुरन्त बाद 12–15 टन/हे की दर से हरी पत्तियों से ढक देना चाहिए। यह प्रक्रिया बुवाई के 40 एवं 90 दिन पश्चात निराई–गुड़ाई एवं खाद की शेष मात्राओं के प्रयोग के पश्चात करने से भी उत्पादन में वृद्धि देखी गई है। इस प्रक्रिया को मल्चिंग कहते हैं। इसके लिए 7.5 टन/हे. है, हरी पत्तियों की आवश्यकता पड़ती है।

निराई–गुड़ाई एवं सिंचाई

हल्दी में निराई–गुड़ाई से अधिक तीन बार करना चाहिए। यह निराई–गुड़ाई बुवाई के 60, 90 और 120 दिन बाद करनी चाहिए। हल्दी लम्बी अवधि की फसल होने के कारण इसमें समुचित सिंचाई की आवश्यकता होती है। चूँकि हल्दी की बुवाई मई–जून में की जाती है अतः बुवाई से पूर्व वर्षा न होने की दशा में आवश्यकतानुसार 6–7 दिनों के अन्तराल पर वर्षा की स्थिति को देखते हुए सिंचाई करते रहना चाहिए। शीत ऋतु में यह सिंचाई 10–15 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए। क्योंकि हल्दी के खेत में नमी 50–75 प्रतिशत से ऊपर बनी रहनी चाहिए इसलिए दोमट भूमि के लिए 15–25 सिंचाई एवं बलुई दोमट भूमि में 40 सिंचाई तक की संस्तुति की गई है।

कीट व रोग

सामान्यतः हल्दी की फसल में कीट एवं बीमारियों का प्रकोप कम देखने को मिलता है परन्तु फिर भी कभी–कभी कीट एवं रोगों का प्रकोप दिखाई पड़ता है। कीटों, रोगों एवं उनके उपचार के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी नीचे दी गई है।

कीट

प्ररोह बेधक (शूट बोरर)

प्ररोह बेधक हल्दी का अत्यधिक नुकसान दायक कीट है। इसके लार्वा तनों में छेद कर देते हैं और अंकुरित तने को खा जाते हैं, जिसके फलस्वरूप तना पीला होकर सूख जाता है। छदम तने में छिद्र की मौजूदगी (जिसके जरिए कीट का मल निकलता है) तथा केन्द्रीय तना (शूट) का कुम्हलाना कीट के प्रकोप का लक्षण है। प्रौढ़, छोटे पतंगे होते हैं जिनके संतरी रंग के पंखों पर छोटे–छोटे काले धब्बे होते हैं। इनका प्रकोप बरसात के मौसम में होता है। अतः इनके नियंत्रण के लिए जुलाई से अक्टूबर के दौरान 21 दिन के अन्तराल पर मोनोक्रोटोफास 36 प्रतिशत 2 मिली दवा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से कीट पर प्रभावी नियंत्रण होता है।

लीफ रोलर्स

लीफ रोलर्स का लार्वा पत्तियों को काट देता है और ये आपस में लिपट जाती है। लिपटी हुई पत्तियों को लार्वा अन्दर से खाता है। प्रौढ़, मध्यम आकार की तितली जैसा होता है जिसके भूरे काले पँख होते हैं। गंभीर संक्रमण की दशा में नियंत्रण हेतु कार्बेरिल 3.0 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

प्रकंद राइजोम स्केल

राइजोम स्केल खेत तथा भण्डार में प्रकन्दों को संक्रमित करता है। यह खेत में पौधे का रस चूसता है। खेत में गंभीर प्रकोप होने पर पौधा कुम्हला कर सूख जाता है। भण्डार में कीट का प्रकोप होने पर कंद कुम्हला जाते हैं तथा इससे कन्द का अंकुरण भी प्रभावित होता है। प्रौढ़ मादा स्केल, छोटे, गोलाकार और हल्के भूरे से मटमैले रंग के होते हैं तथा राइजोम पर पपड़ी के रूप में दिखाई देता है। इस कीट से प्रभावित पौधे को उखाड़ कर फेंक देना चाहिए जिससे दूसरे पौधे प्रभावित न हो सके तथा भण्डारण एवं बुवाई से पूर्व कन्दों को क्वनिल 0.075 प्रतिशत के घोल में दो बार डुबोना चाहिए।

रोग

पत्ती चित्ती (लीफ ब्लाच)

पत्तियों के किसी भी ओर, छोटे, अण्डाकार, आयताकार तथा अनियमित भूरे धब्बों के रूप में यह रोग दिखाई देता है। जिन पत्तियों पर इनका प्रकोप होता है वे शीघ्र ही गंदी पीली या गहरी भूरी दिखाई देने लगती है जिससे उपज में गिरावट आ जाती है। गंभीर प्रकोप होने पर पौधा झुलसा हुआ भी दिखाई देता है। इसके नियंत्रण हेतु डाईथेन एम–45 की 2 ग्राम/लीटर पानी में घोल का दो बार छिड़काव करना चाहिए।

पत्ती धब्बा (लीफ स्पॉट)

नई पत्तियों के ऊपरी सतह पर अलग–अलग आकार के भूरे धब्बों का दिखाई देना इस रोग का लक्षण है। ये धब्बे अण्डाकार, पत्तियों के केन्द्र में सफेद अथवा भूरे रंग के होते हैं। बाद में यह धब्बे समस्त पत्तियों पर दिखाई देने लगते हैं। प्रभावित पत्तियाँ अचानक सूख जाती हैं। जिससे प्रकंदों का विकास और उपज दोनों ही प्रभावित होती है। इस रोग पर नियंत्रण हेतु 0.3 प्रतिशत जिनेब या 1 प्रतिशत बोर्डो मिश्रण के दो छिड़काव से रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

प्रकन्द गलन (राइजोम राट)

इस रोग के कारण प्रकंदों में गलन किनारों से शुरू होती है और पत्तियाँ सूख जाती है। छदम तने का कालर भाग मुलायम हो जाता है, जिससे पौधा गिर जाता है। इस रोग से बचाने के लिए भण्डारण तथा बुवाई के समय मातृ कन्दों को 30 मिनट तक 0.3 प्रतिशत डाईथेन एम–45 में डुबोना चाहिए। जब खड़ी फसल में यह रोग दिखाई दे तो मेड़ पर (जिस पर हल्दी की बुवाई की गई हो) 0.3 प्रतिशत डाईथेन एम–45 या 0.3 प्रतिशत सिरेसान के दो छिड़काव करना चाहिए।

फसल की खुदाई एवं उपज

हल्दी की अगेती, मध्यम तथा पछेती प्रजातियाँ बुवाई से क्रमशः 7–8, 8–9 एवं 9–10 माह में पककर खुदाई के लिए तैयार हो जाती है। फरवरी से अप्रैल तक खुदाई कर हल्दी की कन्द निकाली जाती है तथा साफ करके ढेर के रूप में एकत्रित कर ली जाती है। अच्छी फसल होने की दशा में 250 से 315 कुन्तल प्रति हेक्टेयर की दर से ताजी हल्दी प्राप्त होती है, जो कि प्रोसेसिंग के उपरान्त 35 से 50 कुन्तल तक रह जाती है। हल्दी की पत्तियों के आसवन से 20 से 25 किग्रा/हे तेल भी प्राप्त होता है।

हल्दी का प्रक्रियाकरण

हल्दी के प्रक्रियाकरण में मुख्यतः चार चरण जैसे– उबालना, सुखाना, पॉलिश करना तथा रंग चढ़ाना होता है।

हल्दी को उबालना

खुदाई के बाद हल्दी के मातृ कन्द से अन्य कन्दों का सुरक्षित भंडारण कर लेते हैं। कन्दों को अच्छी तरह से धोने के पश्चात उबाला जाता है। उबालते समय चूने के पानी अथवा सोडियम बाई कार्बोनेट का उपयोग किया जाता है। उबालने का कार्य गैल्वेनाइन्ड लोहे के पात्रों/कड़ाहियों में किया जाता है। इसके अतिरिक्त मिट्टी अथवा ताँबे के पात्र भी उबालने में प्रयोग होता है। कन्दों को उबालने की क्रिया लगभग 45–60 मिनट तक चलती है। जब तक झाग आना अथवा एक विशेष प्रकार की गंध आना प्रारम्भ हो जाय अथवा इसके अतिरिक्त उबली हुई कन्दों को उंगली से या लकड़ी से दबाकर देखा जा सकता है। यदि कन्द दबाने से पूर्णतया दब जाये तो यह माना जा सकता है कि कन्द उबालने की प्रक्रिया पूर्ण हो चुकी है। यह ध्यान रखना चाहिए कि कन्द पूर्णतया उबल जाये/हल्दी के कन्द को उबालने के लिए एक विशेष प्रकार की छिद्रयुक्त कढ़ाई का प्रयोग भी किया जा सकता है। इस छिद्र युक्त कढ़ाई में हल्दी की

गाँठें/कन्द रखकर बड़े पात्र में उबलते पानी में कन्द वाली छिद्रयुक्त कढ़ाई को डालते हैं। कंद उबल जाने के उपरान्त छिद्रयुक्त कढ़ाई से बाहर निकालकर उबली हुई कन्द की जगह नये कन्द पुनः उबालने हेतु रखे जा सकते हैं।

सुखाना

उबले हुए कन्दों को धूप में सुखाया जाता है। इन्हें बाँस की चटाई अथवा दरी आदि पर 5–7 सेमी मोटाई की परत बनाकर सुखाया जाता है। रात्रि के समय इन कन्दों को एकत्र कर ढक देना चाहिए। धूप की स्थिति एवं तीव्रता के अनुसार कन्द 10–15 दिनों में पूर्णतया (6 प्रतिशत तक नमी) सूख जाते हैं। कन्दों को आधुनिक मशीनों द्वारा सुखाने हेतु 60 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान की गर्म वायु का संचारण भी लाभकारी पाया गया है। हल्दी की प्रजाति एवं अन्य परिस्थितियों के अनुसार सूखने के उपरान्त हल्दी, गीली हल्दी की तुलना में केवल 15–30 प्रतिशत ही शेष रह जाती है।

हल्दी की पॉलिशिंग

सूखने के उपरान्त प्राप्त हुई हल्दी देखने में लुभावनी नहीं दिखती। अतः इनके बाहरी आवरण पर रंग चढ़ाना अति आवश्यक हो जाता है। रंग चढ़ाने हेतु कन्दों को आपस में रगड़ा जाता है, जिससे कन्दों के बाहरी आवरण पर चमक पैदा हो जाती है। इस क्रिया द्वारा रंग चढ़ाने को पॉलिशिंग कहते हैं। इसके लिए हस्तचलित/मशीनों से चलाये जाने वाले ड्रम/पॉलिशर भी प्रचलन में हैं। इन ड्रमों को घुमाने से सूखी हल्दी की गाँठें आपस में एवं ड्रम की दीवार से घर्षण करती है जिससे पॉलिशिंग की प्रक्रिया पूर्ण होती है तथा सूखी गाँठों में चमक पैदा हो जाती है।

हल्दी की रंगाई

हल्दी का अच्छा रंग ग्राहकों को आकर्षित करता है। अतः हल्दी की रंगाई के लिए सूखी गाँठों में 2 किग्रा प्रति कुन्तल की दर से हल्दी पाउडर मिलाया जाता है। इस प्रक्रिया को हल्दी की रंगाई कहते हैं।

बीज संग्रहण

खुदाई के उपरान्त प्राप्त हल्दी के कन्दों को बिक्री के लिए बाजार भेजा जा सकता है तथा आवश्यकतानुसार कुछ भाग अगले साल बुवाई हेतु बीज स्वरूप रखा जा सकता है। इन कन्दों को एक गहरे गढ्ढे में रखा जाता है। संग्रहित करने से पूर्व इन कन्दों को 0.25 प्रतिशत इन्डोफिल एन–14, 0.15 प्रतिशत बावस्टीन, 0.05 प्रतिशत मैलाथियान से 30 मिनट तक उपचारित करना चाहिए। उपचारित करने के पश्चात इन कन्दों को छाया में सुखाया जाता है। इन कन्दों को रखने हेतु गड्ढा प्रायः 1 मीटर चौड़ा, 2 मीटर लम्बा तथा 30 सेमी गहरा समलम्ब आकार में होना चाहिए।

विपणन

भारत में पैदा की गई हल्दी की 90 प्रतिशत खपत देश में ही हो जाती है। शेष 10 प्रतिशत का निर्यात अन्य देशों में किया जाता है। जिनमें श्रीलंका, दक्षिण अफ्रीका, ईरान, संयुक्त राज्य अमेरिका एवं ब्रिटेन प्रमुख हैं। खुदरा बाजार में आजकल हल्दी की कीमत 90–100 रूपये प्रति किग्रा से भी ज्यादा है।

निष्कर्ष

देश के विभिन्न भागों में किये गये परीक्षणों तथा उनसे प्राप्त परिणाम से यह स्पष्ट संदेश मिलता है कि लगातार धान्य फसलों को उगाने से मृदा में किसी न किसी सूक्ष्म तत्व की कमी होने के कारण फसलों की उपज प्रभावित हो रही है। लगातार घटती प्रति व्यक्ति जोत आकार से भी किसान खेती में अधिक लाभ नहीं कमा पा रहे हैं। अतः अन्य फसलों को अपनाकर कृषि में उपज व आय को बढ़ाया जा सकता है। उपयुक्त फसल चक्र के अनुसार खेती करने से किसानों को अधिक आय प्राप्त होकर वे खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकेंगे।●

दुधारू पशुओं में टीकाकरण का महत्व

डी.डी. सिंह*, ए.के. राय*, एस.के. यादव** एवं ए.पी. राव*

दुधारू पशु से अधिक दूध एवं प्रति वर्ष बच्चे प्राप्त करने हेतु यह आवश्यक है कि पशु पूर्ण रूप से स्वस्थ तथा निरोगी रहे। पशु का स्वास्थ्य यदि अच्छा होगा, तब वह गाय अथवा भैंस अपनी क्षमता अनुसार दूध का उत्पादन करेगा साथ ही साथ प्रजनन सम्बन्धित अन्य विकार के भी होने की संभावना कम हो जाती है और अन्ततः हमारे पशुपालक भाइयों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति सुदृढ़ होगी। पशुओं को स्वस्थ बनाये रखने में आहार, आवास, सफाई एवं प्रजनन प्रबन्धन के साथ–साथ स्वास्थ्य प्रबन्धन पर भी पशुपालक को विशेष ध्यान देना आवश्यक है, विशेष रूप से पशु को विभिन्न बीमारियों को समय से टीकाकरण कराने में, क्योंकि बचाव ईलाज से बेहतर होता है। यदि पशु एक बार बीमार हो गया तो उसके ईलाज में भी पशुपालक का अच्छा खासा पैसा खर्च होता है, साथ ही दूध उत्पादन में भी भारी कमी आती है। हमारे देश में पशुपालन विभाग द्वारा किये गये एक सर्वे के अनुसार केवल खुरपका–मुँहपका बीमारी से ही रूपये 12000–14000 करोड़, जबकि गलघोंटू रोग से लगभग 100 करोड़ की वार्षिक क्षति होती है। अतः लाभदायक पशुपालन व्यवसाय के समुचित विकास के साथ–साथ देश के सर्वांगीण विकास में महती भूमिका हेतु यह आवश्यक है कि रोगों की रोकथाम एवं नियंत्रण पर विशेष ध्यान दिया जाये।

टीकाकरण करने से रोगों की प्रतिरक्षा होती है। प्रतिरक्षा किसी विशेष संक्रामक रोग के प्रति सुरक्षित होने की अवस्था को कहते हैं। प्रतिरक्षा विभिन्न प्रकार की होती है जैसे वंशागत प्रतिरक्षा, अर्जित प्रतिरक्षा। टीकाकरण कृत्रिम विधि से प्राप्त अर्जित प्रतिरक्षा होती है। इस प्रकार की प्रतिरक्षा पशुओं में विभिन्न प्रकार के रोगों के प्रति बचाव के टीके लगने से उत्पन्न होती है। इसमें रोग फैलाने वाले जीवाणु अथवा विषाणु की शक्ति को कम करके अथवा तनुकरण करके यह टीके तैयार किये जाते हैं। इस अवस्था में, इसे एण्टीजन कहते हैं, बनाते हैं, जो काफी समय तक शरीर में अपना प्रभाव स्थिर रखकर वर्षों तक रोग को होने नहीं देते हैं।

टीकाकरण कार्यक्रम

दुधारू पशुओं विशेषतया गाय एवं भैंस में प्रमुख संक्रामक रोगों के लिए टीकाकरण का कार्यक्रम सारिणी–1 के अनुसार होना चाहिए।

टीका मिलने का स्रोत

(1) भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान (आई. वी.आर.आई.) इज्जतनगर, बरेली

(2) इंडियन इम्यूनोलॉजिकल कम्पनी, हैदराबाद

(3) प्रान्तीय जैव उत्पाद प्रयोगशाला

टीकाकरण से पूर्व रखी जाने वाली कुछ महत्वपूर्ण सावधानियाँ

(1) गाभिन पशु में टीकाकरण पशु चिकित्सा से परामर्श के बाद ही लगवानी चाहिए।

(2) टीकाकरण के तुरन्त बाद प्रतिजैविक दवाएं नहीं देना चाहिए।

(3) टीकाकरण से पूर्व पशुओं को कृमिनाशक औषधि अवश्य देना चाहिए।

(4) टीका लगवाने से पूर्व उसकी वैधिकता तिथि एवं अन्य निर्देशों को भली भाँति देख लेना चाहिए।

(5) टीका लगाते समय टीके की शीशियों को अच्छी प्रकार से हिला लेना चाहिए।

**प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, *सह प्राध्यापक, (पशु चिकित्सा विज्ञान)
***वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, के.वी.के. मसौधा, अयोध्या, उ.प्र.

सारिणी–1
दुधारू पशुओं में टीकाकरण

रोग	उम्र एवं टीकाकरण	समय	प्रतिरोधकता	टीके की मात्रा
खुरपका–मुँहपका रोग	जन्मोंपरान्त 4–6 माह बाद, सभी उम्र के पशुओं में,	जनवरी से फरवरी	इसकी प्रतिरोधकता लगभग 15 दिन में स्थापित हो जाती है एवं 6–8 महीने तक चलती है। इसके बाद दूसरा टीकाकरण करना चाहिए।	5 मिली त्वचा के अन्दर करना चाहिए।
गलघोंटू	जन्मोंपरान्त 4–6 माह बाद, सभी उम्र के पशुओं में,	मानसून से पूर्व	इसकी प्रतिरोधकता लगभग 21 दिन में स्थापित हो जाती है एवं 1 साल तक चलती है। इसके बाद पुनः टीकाकरण करना चाहिए।	5 मिली त्वचा के अन्दर करना चाहिए।
एन्थ्रेक्स	जन्मोंपरान्त 4–6 माह बाद, सभी उम्र के पशुओं में,	फरवरी से मई	इसकी प्रतिरोधकता लगभग 10 दिन में स्थापित हो जाती है एवं 1 साल तक चलती है। इसके बाद पुनः प्रति वर्ष टीकाकरण करना चाहिए।	5 मिली त्वचा के अन्दर करना चाहिए।
ब्लैक–क्वार्टर	जन्मोंपरान्त 4–6 माह बाद, सभी उम्र के पशुओं में,	मानसून से पूर्व	इसकी प्रतिरोधकता लगभग 15 दिन में स्थापित हो जाती है एवं 1 साल तक चलती है।	5 मिली त्वचा के अन्दर करना चाहिए।
संक्रामक गर्भपात (ब्रुसेलोसिस)	साधारणतया टीकाकरण 6 से 9 माह की बछिया को करना चाहिए।	सभी ऋतु में	इसकी प्रतिरोधकता प्रथम व द्वितीय गर्भकाल तक रहती है।	5 मिली त्वचा के अन्दर करना चाहिए।
रेबीज (अलर्क रोग)	जन्म के बाद अथवा व्यस्क में पागल कुत्ते के काटने पर कभी भी	पागल कुत्ते के काटने पर	इसकी प्रतिरोधकता काफी समय तक रहती है।	02 मिली, 0, 3, 7, 14, 28, 90 पर लगातार
थिलेरिया	दो माह से बड़े उम्र के बछड़ों में थिलेरिया का टीका	वर्ष में कभी भी	इसकी प्रतिरोधकता जीवन पर्यन्त उस पशु में रहती है।	03 मिली, त्वचा के नीचे करना चाहिए।

(6) टीकाकरण के बाद खाली हो चुकी शीशियों को नष्ट कर देना चाहिए।

(7) पशु को टीका लगाते समय पशु को उचित प्रकार से पकड़ना चाहिए ताकि सुई स्वय की त्वचा को न भेद पाए।

(8) रोग ग्रसित पशु को टीका नहीं लगवाना चाहिए।

(9) जिस स्थान पर बीमारी फैल रही हो तो वहाँ टीका नहीं लगवाना चाहिए।

(10) हमेशा रोग के प्रकोप होने के पूर्व ही टीकाकरण करना चाहिए।

(11) सभी जानवरों को टीका एक साथ दिलाना चाहिए।

(12) टीकाकरण की तिथि, टीका का नाम और फिर कब देना है, इसकी जानकारी पशुपालक को स्वयं रखनी चाहिए।●

पी.पी.आर. बकरियों की महामारी

डॉ. सुरेन्द्र सिंह*, डॉ. एस.के. सिंह**, डॉ. एस.एन.लाल*** एवं डॉ. अनिल कुमार राय****

भारत में कृषि कार्य के साथ–साथ पशुपालन एक मुख्य व्यवसाय है एवं ग्रामीण कृषकों की आय का प्रमुख साधन है। बकरी पालन लघु, सीमांत किसानों तथा भूमिहीन व्यक्तियों के द्वारा किया जाता है। इस व्यवसाय को लाभकारी बनाने के लिए बकरियों का स्वस्थ होना अति आवश्यक है, जिससे उनकी वृद्धि सुचारू ढंग से हो। इसके लिए बकरी पालकों को बकरी की इस महामारी की पहचान, कारण, बचाव एवं उपचार आदि के विषय में जानकारी होना बहुत आवश्यक है, क्योंकि इस बीमारी में एक साथ अधिक संख्या में पशु मर जाते हैं जिससे यह व्यवसाय प्रभावित हो जाता है, एवं गरीब कृषकों को काफी आर्थिक नुकसान का सामना करना पड़ता है। पी.पी. आर. बकरी तथा भेंड़ में होने वाला घातक संक्रामक रोग है, क्योंकि यह स्वस्थ पशुओं में तीव्रता से संचारित होकर एक ही समय अधिक पशुओं को रोगग्रसित कर देता है एवं समुचित उपचार के अभाव में मृत्यु हो जाती है। पी.पी.आर. एक फ्रेन्च नाम है जिसे पैस्टीडेस पैटिटस रूमिनेन्टस यानि 'छोटे जुगाली करने वाले पशुओं की महामारी' कहा जाता है।

बीमारी के लक्षण

यह बीमारी मारबीली विषाणु (पैरामिक्सोवाइरस) समूह के एक विषाणु से होती है। जब स्वस्थ पशु बीमारी से ग्रस्त पशु के दूषित चारा, दाना, पानी, मल–मूत्र इत्यादि के संपर्क में आता है तो उसमें यह बीमारी तेजी से फैलती है। इसका संचारण वायु के द्वारा होने के कारण अधिक संख्या में एक साथ पशुओं के रहने से अधिक होता है।

यह रोग पूरे साल बकरियों को ग्रसित कर सकता है लेकिन इसका असर बरसात तथा ठंडी में जब तापमान कम होता है तब इस बीमारी के होने की अधिक संभावना रहती है। यह रोग 3–12 माह की बकरियों में अधिक होता है।

लक्षण

रोगी पशु में तेज बुखार एवं शरीर का तापक्रम 105–107 डिग्री फारेनहाइट हो जाता है। इसमें पशु सुस्त, आहार ग्रहण करना कम, जुगाली बंद कर देता है, जिससे वह कमजोर हो जाता है। आँखे लाल, मुँह, नाक, आँख से पानी बहना आदि लक्षण रोगी पशुओं में प्रदर्शित होते हैं। जैसे ही बुखार कुछ कम होता है तो मुँह के अन्दर मसूड़ों तथा जीभ पर लाल–लाल दाने फूटकर घाब बन जाते हैं, जिसमें सड़न पैदा हो जाती है। आँखों में कीचड़ आने लगता है एवं तेज बदबूदार रक्त और आँव मिला हुआ दस्त आने लगते हैं। यदि पशु गर्भावस्था में है तो उसका गर्भपात हो जाता है। तुरन्त उपयुक्त इलाज न होने पर दस्त ज्यादा तथा घावों में सड़न बढ़ जाती है एवं पशु कमजोर होकर मर जाता है।

रोग की अवधि

रोग फैलने के चार से आठ दिन के अन्दर रोगी पशु की मृत्यु हो जाती है। इस बीमारी से ग्रस्त पशुओं की मृत्यु दर 80 से 90 प्रतिशत तक हो जाती है जो पशु बच जाते हैं उन्हें ठीक होने में काफी समय लग जाता है।

उपचार

रोग के लक्षण दिखाई देने पर तुरन्त पशु चिकित्सक से संपर्क करके उपचार कराना चाहिए, जिससे शीघ्र ही पशु स्वस्थ हो सके।

बचाव के उपाय

यह एक भयंकर रोग है इसलिए स्वस्थ पशुओं को

*वि.व.वि. (पशु विज्ञान), **वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष, के.वी.के., हैदरगढ़, बाराबंकी, ***वि.व.वि. (पशु विज्ञान), के.वी.के., बस्ती,
****प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या,

बचाये रखने के लिए निम्नलिखित उपाय करना चाहिए

- बकरियों के आवास को साफ–सुथरा तथा सूखा बनाये रखें। फर्श पक्की होने की दशा में पानी में फिनायल मिलाकर धुलाई करना चाहिए। यदि मिट्टी की फर्श हो तो बुझा चूना का प्रयोग करें।
- रोगी पशु का दूषित चारा एवं पानी अन्य पशु को न दें। सभी पशुओं को स्वच्छ ताजा आहार एवं पानी दें।
- रोगी पशु को अन्य स्वस्थ पशुओं से अलग बाँधें एवं उपचार करायें।
- जिस क्षेत्र में रोग की संभावना हो वहाँ के दूषित चारागाहों में स्वस्थ पशु को चरने के लिए न भेजें।
- रोग से मरे हुए पशु को कम से कम दो मीटर गहरे गड्ढे में बुझे चूने के साथ दबा देना चाहिए अथवा जला दें। दूषित पशु का मांस न खायें।
- रोगी पशु के संपर्क में आयी वस्तुओं जैसे चारा, बिछावन, रस्सी आदि को जला देना चाहिए। बर्तन तथा जंजीर पानी में अच्छी प्रकार उबालने के पश्चात ही उपयोग में लायें। आवास की सफाई तथा चूना डालने के एक–दो दिनों बाद ही प्रयोग में लाना चाहिए।
- इस रोग से बचाव के लिए नियमित रूप से स्वस्थ पशुओं को 6 माह की उम्र पर निकटतम पशु चिकित्सालय के माध्यम से प्रत्येक वर्ष एक टीकाकरण अवश्यक करवाना चाहिए।

रोगी पशु का प्रबंध

रोग होने की स्थिति में निम्न प्रकार प्रबंध करना चाहिए–

रोगी पशु को स्वस्थ पशु के समूह से अलग करें।

बीमारी से ग्रस्त पशु की नाक/मुँह को एक प्रतिशत फिटकरी के घोल से सुबह शाम साफ करके मुँह के अन्दर के घाव पर शहद या शीरे में सुहागा मिलाकर लगायें।

पूँछ के आस पास फिनाइल के घोल से धोकर सफाई रखें और मल मूत्र पर चूना डालकर उठाना चाहिए।

रोग की पहचान होने पर पशु चिकित्सक से उपचार कराना लाभकारी होता है।

बीमार भेड़–बकरियों को हल्का (मुलायम) चारा व दलिया आदि देना चाहिए।

बीमार जानवर को एनरोसिन एन्टीबायोटिक 5 दिन तक देने से मृत्यु दर कम हो जाती है।●

कृषि लागत कम करने हेतु सुझाव

- ऊसर व बंजर भूमि का उपचार कर कृषि योग्य बनाकर खेती के प्रयोग में लाएं।
- सिंचाई जल उपयोग में बृद्धि हेतु ड्रिप एवं स्प्रिकलर पद्धति पर बढावा देना तथा इसके प्रयोग पर प्रशिक्षण प्रदान कर इसे बढाने तथा क्रान्तिक अवस्थाओं पर उचित मात्रा में सिंचाई करें।
- कृषि लागत में कमी हेतु कृषि यन्त्रीकरण का प्रयोग कर जीरो टिलेज, सीडड्रिल व कम्बाइन हार्वेस्टर के साथ भूसा बनाने वाली मशीन के प्रयोग पर बल दिया जाय।
- मृदा स्वास्थ्य बढानें के लिए जैविक उर्वरक, कार्बनिक खाद, फसल अवशेषों का प्रबन्ध व मृदा स्वास्थ्य कार्ड के अनुसार उर्वरकों के संतुलित प्रयोग पर बल दिया जाना जिससे उत्पादन बढ़नें के साथ लागत में कमी आये।

फरवरी माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में

डॉ. सौरभ वर्मा
सह प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

(1) समय से बोये गये गेहूँ में अवस्थानुसार नत्रजन की शेष मात्रा की टाप ड्रेसिंग करें।

(2) जिस फसल में बालियाँ निकल आई हैं और उनमें कुछ काली बालियाँ दिखायी दें तो उन्हें निकालकर नष्ट कर दें या गाड़ दें।

सब्जी एवं उद्यान में

डॉ. एस. के. वर्मा
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष

(1) गर्मी वाली बैंगन की पौध जो नवम्बर माह में डाली गयी थी उसकी रोपाई लम्बी किस्म में 60 गुणा 60 सेमी तथा गोल वाली किस्म में 75 गुणा 75 सेमी पर करें।

(2) गर्मी वाली मूली पूसा चेतकी किस्म की बुवाई करें।

(3) लोबिया की पूसा कोमल, पूसा फागुनी, ऋतुराज 1552 किस्मों की बुवाई 20 किग्रा नत्रजन, 50 किग्रा फास्फोरस तथा 30 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से कूड़ों में डाल कर करे।

(4) इस माह में भिण्डी की परभनी क्रान्ति, पूसा सावनी पंजाब–7 प्रजातियों की बुवाई 20–25 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बीज को 2 ग्राम कैप्टान या थीरम से प्रति किग्रा बीज उपचारित करने के बाद करें।

(5) आम में खर्रा रोग की रोकथाम के लिए 2 ग्राम घुलनशील गंधक अथवा कैराथेन एक मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

(6) आम के पाँच वर्षीय पेड़ में 25 किग्रा गोबर, 250 ग्राम नाईट्रोजन, 125 ग्राम फास्फोरस तथा 250 ग्राम पोटाश मिट्टी में मिलाकर गुड़ाई कर देना चाहिए तथा नमी के कमी की दशा में सिंचाई आवश्यक है।

पौध संरक्षण

डॉ. वी. पी. चौधरी
सहायक प्राध्यापक (पादप रोग)

(1) गेहूँ में झुलसा एवं गेरूई रोग के नियंत्रण के लिए 0.2 प्रशित डाइथेन एम–45 अथवा प्रोपीकोनाजोल 0.1 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।

(2) मटर में बुकनी रोग के नियंत्रण के लिए घुलनशील गंधक के 0.3 प्रतिशत अथवा कैराथेन के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

(3) तिलहनी फसलों में झुलसा, सफेद, गेरूई एवं तुलासित रोग नियंत्रण के लिए डायथेन एम–45 के 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।

(4) प्याज की बैंगनी धब्बा रोग के नियंत्रण के लिए 0.3 प्रतिशत ताम्रयुक्त रसायन के घोल का छिड़काव करें।

(5) आम के भुनगा कीट नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफास अथवा मेटासिस्टाक्स 1 से 1.25 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पशुपालन

डॉ. अनिल कुमार
सह प्राध्यापक (पशु विज्ञान)

(1) गर्भित तथा शीघ्र ब्यायी भेड़ों की उचित देखभाल किया जाये।

(2) मुर्गियों से अच्छा उत्पादन लेने के लिए उन्हें पौष्टिक आहार के साथ–साथ बरसीम घास भी दिया जाये।

(3) मुर्गियों का उत्पादन स्तर तथा अच्छी वृद्धि बनाये रखने के लिए बिछावन की प्रतिदिन सफाई किया जाये तथा सप्ताह में कम से कम दो बार उसकी गुड़ाई अवश्य किया जाये।●

संकलनकर्ता : डॉ. अनिल कुमार, सह प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : अमरूद की खेती कैसे करें?

(श्री सीता राम सिंह, ग्राम आशापुर, जनपद अयोध्या)

उत्तर : इलाहाबाद सफेदा, लखनऊ–49, चित्तीदारर लालगूदे वाला, बेदाना अमरूद की प्रमुख किस्में हैं। इसके पौध लगाने का उपयुक्त समय जुलाई–अगस्त का महीना है। पौध लगाने के लिए 75 सेमी लम्बे और 75 सेमी चौड़े तथा एक मीटर गहरे गढ्ढे खोदकर 15–20 दिन तक खाली छोड़ देना चाहिए। इसके बाद उनमें सड़ी गोबर की खाद और मिट्टी बराबर मात्रा मे मिलाकर गढ्ढे में भरकर सिंचाई कर देना चाहिए। इस प्रकार तैयार किये गये गढ्ढे में पौध लगाना चाहिए।

प्रश्न : पपीते के पौधों में फल गुच्छेदार हो रहा है इसकी रोकथाम कैसे करें?

(श्री राकेश कुमार दुबे, ग्राम विष्णुपुरी, जनपद अयोध्या)

उत्तर : यह विषाणु रोग का लक्षण है जिसके कारण पौधों की वृद्धि रूक जाती है और फूल–फल नहीं लगते। इसकी रोकथाम के लिए प्रभावित फल को काट कर जमीन में दबा दें। पपीता के बाग में जल निकास का उचित प्रबन्ध रखें और जून–जुलाई में कीटनाशी दवा का एक या दो छिड़काव कर देना चाहिए।

प्रश्न : सरसों की खड़ी फसल में माँहू का कीट नियंत्रण कैसे करें?

(श्री संगल लाल, ग्राम हरिगवाँ, जनपद अयोध्या)

उत्तर : सरसों की खड़ी फसल में माँहू के कीट नियंत्रण हेतु मैलाथियान 50 ई.सी. की दो लीटर दवा अथवा इन्डोसल्फान 35 ई.सी. की सवा लीटर दवा 750 लीटर पानी मे घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

प्रश्न : आम में बौर आने वाले है उन दवा कैसे छिड़कें या बिना छिड़के उपचार हो सकता है?

(श्री राम प्रसाद तिवारी, ग्राम शीश माऊ, जनपद अयोध्या)

उत्तर : आम के बौर को खर्रा रोग तथा भुनगा कीट से बचाने के लिए बौर आने के बाद, परन्तु फूल खिलने से पहले 2 ग्राम घुलनशील गंधक (सल्फेस) तथा 0.5 मिली इमिडाक्लोराइड प्रति लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव 1 मिली कैराथेन+1 मिली मेटासिस्टाक्स अथवा इन्डोसल्फान का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर फल टिकाव के बाद करें।

प्रश्न : पोखरों में अक्सर लोग विष डाल देते हैं, जिससे मछलियाँ मर जाती हैं, इसके बचाव का उपाय बतायें?

(श्री अनुज वर्मा, ग्राम भीखापुर, जनपद अयोध्या)

उत्तर : तालाब की रखवाली या पहरेदारी की उचित व्यवस्था करें। यदि लोग चोरी छुपे मछली मार लेते हैं तो उससे बचाव के लिए जल के अन्दर किनारे–किनारे बाँस या अन्य पौधों की डाल टहनियाँ चारों तरफ फैला दें।

प्रश्न : गेहूँ में बथुवा अधिक होता है इसकी रोकथाम कैसे करें?

(श्री बुध राम पटेल, ग्राम कौड़ी कुइयाँ, जनपद अयोध्या)

उत्तर : गेहूँ की फसल की 35 दिन की अवस्था पर 2,4 डी. सोडियम सॉल्ट 80 प्रतिशत की 625 ग्राम मात्रा को 500 से 600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव कर सकते हैं। परन्तु इससे अच्छे परिणाम के लिए 2,4 डी 200 ग्राम सक्रिय पदार्थ के साथ आइसोप्रोट्यूरान 500 ग्राम (सक्रिय पदार्थ) प्रति हेक्टेयर 600 से 800 लीटर पानी में घोलकर उक्त अवस्था पर छिड़काव करने से गेहूँ की फसल की अधिकांश खरपतवार समूल नष्ट हो जाती है।

प्रश्न : दुधारू पशुओं को संतुलित आहार (दाना) कितनी मात्रा में दें?

(श्री विनोद राय, ग्राम गुलौरी बुजर्ग, जनपद अयोध्या)

उत्तर : दुधारू पशुओं को संतुलित आहार की मात्रा उनके दुध उत्पादन की क्षमता के ऊपर निर्भर करता है। दुधारू भैंस को 2.5 किग्रा दुग्ध उत्पादन पर 1 किग्रा दाना तथा गाय को 3 किग्रा दुग्ध उत्पादन पर 1 किग्रा दाना देना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त 1 से 1.5 किग्रा दाना उसके स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए अतिरिक्त देना आवश्यक है।●

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित